www.thearyasamaj.org

ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 22 सितम्बर 2013 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 22 सितम्बर, 2013 से 28 सितम्बर 2013

आश्विन. कृ.–03 ● वि० सं०–2070 ● वर्ष 78, अंक 74, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 190 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,114 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. प्रशिक्षण महाविद्यालय अमृतसर में यज्ञ से नया सत्र शुरू हुआ

डी.ए.वी. महिला प्रशिक्षण महाविद्यालय, बेरी गेट, अमृतसर में नव सत्र आरंभ करने हेतु माननीय श्री जे.के. लूथरा जी, अध्यक्ष, स्थानीय समिति के कुशल मार्गदर्शन में हवन यज्ञ का आयोजन किया गया तथा वन–महोत्सव भी मनाया गया। इस सुअवसर पर बख्शी राम अरोड़ा, मेयर, नगर निगम, अमृतसर मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थे। कार्यकारी प्राचार्य डॉ. (श्रीमति) विनीता गर्ग ने मुख्य अतिथि व अन्य उपस्थित अतिथियों का स्वागत किया। इसके उपरान्त हवन यज्ञ का प्रारम्भ किया गया और सभी ने वेद मन्त्रों का उच्चारण किया। इस अवसर पर श्री प्रदीप कुमार सरीन सदस्य बी.जे.पी., डॉ. हरमहेन्द्र सिंह बेदी (पूर्वाध्यक्ष, हिन्दी विभाग गुरु नानक देव यूनिवर्सिटी), श्री अरुण महाजन–प्रधान आर्य समाज लारेंस रोड़, श्री इन्द्रपाल आर्य–प्रधान आर्य समाज लक्ष्मणसर, श्री राकेश मेहरा मन्त्री केन्द्रीय आर्य समाज, अमृतसर, श्री अरुण खन्ना, श्री धर्मपाल मेहरा और भिन्न–भिन्न विद्यालयों और महाविद्यालयों के प्रबुद्ध प्राचार्य स्थानीय समिति के सदस्य व आर्य युवक सभा के सदस्य प्रमुख रुप से मौजूद थे। प्रधानाचार्या जी ने मुख्य अतिथि जी के समाज में योगदान और गतिविधियों से सभी को परिचित करवाया

और महाविद्यालय की उपलब्धियों से भी अवगत करवाया। मुख्य अतिथि श्री बख्शी राम अरोड़ा जी ने अपनी प्रेरणास्पद भाषण में अध्यापक के आदर्श जीवन, सेवाभावना, कर्तव्यनिष्ठा के बारे में बताया और नए भविष्य के लिए शुभकामनाएं दी। श्री जे.के. लूथरा जी ने धन्यवाद ज्ञापित किया तथा महाविद्यालय की छात्राओं को उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना के साथ–साथ आशीर्वाद दिया। समारोह का समापन राष्ट्रीय गान के साथ किया गया।

आर्य समाज झज्जर के बगीचे में हुआ पौधारोपण

यज्ञ समिति झज्जर में यज्ञ–भजन–प्रवचन–अभिनन्दन समारोह का विशेष आकर्षक बिन्दु रहा– एक ही मौहल्ले भट्टी गेट झज्जर के नर्सरी कक्षा से दसवीं कक्षा तक के सवा सौ से अधिक बच्चों ने गायत्री महामन्त्र का भावार्थ कविता के रुप में 'प्रभू तूने हमें उत्पन्न किया...... श्रेष्ठ मार्ग पर चला।' सुनाकर श्रोताओं को मन्त्र मुग्ध कर दिया। महिला आर्य

समाज झज्जर की प्रचार मन्त्री श्रीमती रीना जी आर्या यज्ञ ब्रह्मा रहीं तो भारत स्वाभिमान झज्जर के विद्यार्थिगण वेद मन्त्र पाठी रहें। श्रीमती ममता जी एवं श्री रामनिवास जी मुख्य यजमान रहें। कार्यक्रम के मुख्यातिथि ब्र. सत्यनारायण जी खेड़ी जट रहे। आर्य वीर दल के कर्मठ युवा मुख्यातिथि ने ब्रह्मचर्य की महिमा का बखान किया कार्यक्रम के अध्यक्ष पं. रमेशचन्द्र कौशिक थे।

गुरु नानक देव डी.ए.वी. भिखीविंड में अध्यापक दिवस और जन-सेवा

गुरु नानक देव डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल भिखीविंड में अध्यापक दिवस मनाया गया। इस कार्यक्रम के मुख्यातिथि श्री एस.एम. किसपोटा, कमान्डेंट 163 बी. एन. थे। अन्य माननीय अतिथि श्री इकबाल सिंह बेदी, वाइस चेयरमैन श्री जे. के लूथरा, रिजीनल डायरैक्टर डॉ. श्री मती नीलम कामरा, प्रिंसीपल परमजीत, प्रिंसीपल श्रीमती नीरा शर्मा तथा अन्य कमेटी मैंबर थे। इस अवसर पर विद्यार्थियों ने रंगारंग कार्यक्रम प्रस्तुत करके सब को मंत्रमुग्ध कर दिया। स्कूल के छः अध्यापकों को अनेक राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर किये कार्यों के लिए और सात कर्मचारियों को उनके शिक्षा से संबंधित सभी क्षेत्रों में सराहनीय काम करने के लिए सम्मानित किया गया। अध्यापकों तथा विद्यार्थियों की सराहना के साथ–साथ उन्हें जीवन में प्रगति पथ पर आगे बढ़ने की प्रेरणा दी गई। प्रिंसीपल श्री संजीव कोचर ने मुख्य अतिथि और अन्य अतिथिगण का धन्यवाद किया। इस सुअवसर पर स्कूल के स्टाफ के योगदान से गरीब महिलाओं को सिलाई मशीनें और अपंग महिला को ट्राईसाईकिल भी वितरित की गई। इस शुभ अवसर पर बॉस्केटबाल ग्राऊंड का उद्घाटन भी किया गया और श्री इकबाल सिंह बेदी जी द्वारा छोटे बच्चों के लिए झूले भी लगवाए गए।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – श्री पूनम सूरी

www.thearyasamaj.org

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 22 सितम्बर, 2013 से 28 सितम्बर, 2013

जीवन-यज्ञ अविच्छिन्न रहे

● **डॉ. रामनाथ वेदालंकार**

घृतस्य जूतिः समना सदेवा, संवत्सरं हविषा वर्धयन्ती।
श्रोत्रं चक्षुः प्राणोऽच्छिन्नो नो अस्तु, अच्छिन्ना वयमायुषो वर्चसः।।

अथर्व 16.58.1

ऋषिः **ब्रह्मा**। देवता **यज्ञः**। छन्दः **त्रिष्टुप्**।

● (**घृतस्य**) आत्मतेज-रूप घृत की (**जूतिः**) वेगवती धारा (**समना**) मन-सहित [और] (**सदेवा**) इन्द्रियों-सहित (**संवत्सरं**) शत-संवत्सर जीवन -यज्ञ को (**हविषा**) हवि से (**वर्धयन्ती**) बढ़ाती [रहे]। (**नः**) हमारा (**क्षोत्रं**) क्षोत्र, (**चक्षुः**) नेत्र [और] (**प्राणः**) प्राण (**अच्छिन्नः अस्तु**) अच्छिन्न रहे। (**वयं**) हम (**आयुष**) आयु से [तथा] (**वर्चसः**) वर्चस्विता से (**अच्छिन्नाः**) अच्छिन्न [रहें]।

● मनुष्य का जीवन सौ या सौ से भी अधिक वर्ष तक चलनेवाला एक यज्ञ है, जिसे 'शत-संवत्सर यज्ञ' भी कहा है जाता है। हम चाहते हैं कि हमारा यह यज्ञ निर्विघ्न चलता रहे। जैसे बाह्य यज्ञ तभी प्रवृत्त रह सकता है, जब उसमें यजमान और ऋत्विजों द्वारा निरन्तर हवि की आहुति पड़ती हे, वैसे ही हमारे इस शरीर यज्ञ के निर्बाध चलते रहने के लिए भी यह आवश्यक है कि इसका यजमान और इसके ऋत्विज् इसे हवि द्वारा बढ़ाते रहें। आत्मा ही इस का 'यजमान' है, मन 'ब्रह्म' है, प्राण 'उद्गाता' है, वाणी 'होता' है चक्षु 'अध्वर्यू' है। अतः आत्मा की आत्म-तेज-रूप घृत की आहुति, मन की प्रबल संकल्प की आहुति और सब ज्ञानेन्द्रियों एवं कर्मेन्द्रयों की अपनी-अपनी ज्ञान-कर्म-रूप हवियों की आहुति हमारे इस 'शत-संवत्सर' जीवन-यज्ञ में पड़ती रहनी चाहिए। यदि आत्मा, मन और इन्द्रिय-देव इस यज्ञ में सहायक नहीं होंगे, तो हमारा यह जीवन-यज्ञ समय पूर्व ही विच्छिन्न हो जाएगा। अतः हमारे क्षोत्र, नेत्र, प्राण आदि की शक्तियाँ प्रअक्षुण्ण रहनी चाहिएँ, जिससे हम चिर-काल तक कानों से शब्द, नेत्रों से रूप, नासिका से गन्ध, रसना से रस, त्वचा से स्पर्श का ग्रहण कर सकें और प्राण-अपना आदि की क्रियाओं को सम्यक् प्रकार से करते रहें। यदि हमारी ये इन्द्रियाँ दुर्बल, या अशक्त हो जाती हैं तो हमारे जीवन की वही अवस्था होगी, जो ऋत्विजों के दुर्बल, अशक्त या उदासीन हो जाने पर यज्ञ की होती है। यदि आयु से तथा वर्चस्विता से अच्छिन्न रहना चाहते हैं, तो हमें अपने जीवन-यज्ञ के यजमान और ऋत्विजों को सबल, सशक्त और निरन्तर जागरूक रखना होगा।

हे मेरे आत्मन्! हे मन! हे प्राण! हे इन्द्रिय-देवो! तुम जागते रहो, जीवन-यज्ञ में हवि डालते रहो, यज्ञ को प्रज्ज्वलित, प्रवृद्ध, अच्छिन्न तथा वर्चस्वी बनाये रहो।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

घोर घने जंगल में

● महात्मा आनन्द स्वामी

शरीर को ठीक रखना हो तो अच्छे अन्न की आवश्यकता है, परन्तु साथ ही अच्छे मन की भी आवश्यकता है। सत्य का सम्बंध धर्म से है , उस मार्ग से है जो कल्याण की ओर ले जाता है। यह भी पता चला है कि सोने का यह चमकता हुआ ढकना हट भी सकता है और जब तक न ढक जाये तक तक सत्य और धर्म का दर्शन नहीं होता। परन्तु यह सत्य है? इसका उत्तर भी स्थिर और सत्य है केवल परम ब्रह्म परमात्मा। इस चमकते हुए दहकते हुए, जगमगाते हुए, मन को मोहने वाले, आँखों को धोखा देने वाली झूठ के पीछे छिपा बैठा है, वह।

मैं यह नहीं कहता कि धन सम्पत्ति और बीबी बच्चे सबको छोडकर सिर मुड़ाकर हर की पौड़ी पर जा बैठो। लिप्त मत हो जाओ क्योंकि तुम अजर, अमर सत्य नित्य और शास्वत हो। तुम्हारा वास्तवित साथी इनके पीछे छिपा बैठा है।

त्याग की भावना से इन वस्तुओं का प्रयोग करो। तक इन चमकती हुई लुभानेवाली और चकाचौंध करने वाली वस्तुओं के पीछे तुम्हें यह भगवान दिखाई देगा जिसे देखने के पश्चात् कुछ देखना शेष नहीं।

अब आगे ...

ऐसे लोग लक्ष्य पर पहुँचते हैं। आजकल दिल्ली में प्रदर्शनी (उन दिनों दिल्ली में अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनी हो रही थी) हो रही है न! देश के विभिन्न भागों की, कई अन्य देशों की बनाई हुई वस्तुएँ भी वहाँ विद्यमान हैं। कई वस्तुएँ तो बहुत विचित्र हैं। प्रदर्शनी उत्तम है परन्तु उस अवस्था में जब हम इनसे कुछ सीखें, यह निश्चय करें कि जो वस्तु दूसरे देश बना सकते हैं, उन्हें हम भी बना सकते हैं। ध्यान से देखें कि ये वस्तुएँ कैसे बनाई गई हैं, उन्हीं के अनुसार अपने यहाँ भी इन वस्तुओं को बनाएँ। देश को आगे ले जायें। इसकी समृद्धि में वृद्धि करें। ऐसा करें तब तो लाभ है, नहीं तो कोई लाभ नहीं। ठीक बात को समझना समझने के पश्चात् उसे प्राप्त करने का मार्ग ढूँढना, मार्ग खोजकर उस पर तप और साधना की भावना से चलना- इस प्रकार लाभ होता है। इस प्रकार लक्ष्य-प्राप्ति होती है।

मैं यह नहीं कहता कि इन वस्तुओं को एकदम छोड़ दीजिये। इनका भी प्रयोग कीजिये। इनमें छिपी उस महाशक्ति को भी देखिये जो आनन्द का भण्डार है। दोनों बातें कीजिये परन्तु मर्यादा में रहकर कीजिये। ये नदियाँ हैं न! मर्यादा में रहें, किनारों के भीतर रहें तो इनसे खेतों को पानी मिलता है, पशुओं को घास मिलती है, संसार को अन्न मिलता है। लोग नहाते भी हैं, कपड़े भी धोते हैं। साधु लोग इनके किनारे बैठकर भगवान् का भजन भी करते हैं; परन्तु ये किनारों से बाहर आ जायें, तोड़ दें किनारे, उछल पड़ें बाढ़ बनकर, तब? तब सर्वानाश जागता है, खेत बह जाते हैं, गाँव बह जाते हैं, पशु तथा मनुष्य बह जाते हैं।

यह ठीक नहीं। मर्यादा में रहना ही ठीक है। यह था उपनिषद् के ऋषि को संदेश जब उसने कहा- केवल अन्न ब्रह्म नहीं है, केवल प्राण ब्रह्म नहीं है, दोनों ही मिल जायें, मर्यादा में रहें तभी शक्ति उत्पन्न होती है। इस सन्देश को समझ लिया, देख लिया कि बाहर की वस्तुओं की चमक-दमक कुछ नहीं। प्रभु को प्राप्त किये बिना सच्चा आनन्द नहीं तो फिर साधना के मार्ग पर आगे चल!

बैठ जा किसी शुद्ध पवित्र एकान्त स्थान में जहाँ बार-बार बदलने वाला कोलाहल न हो, जहाँ तीव्र आँधी, वृष्टि या धूप न हो, बहुत सर्दी न हो। बैठ जा वहाँ, आँखें बन्द कर ले और देख अन्दर की ओर। पहले पहल कुछ दृष्टिगोचर नहीं होगा। ठीक वैसे ही अँधेरा दृष्टिगोचर होगा जैसे सिनेमा-हॉल में फिल्म आरम्भ होने से पूर्व दिखाई देता है, परन्तु घबरा

www.thearyasamaj.org

मत! मत रह उस अन्धकार में। जैसे सिनेमा–हॉल में फ़िल्म आरम्भ होती है, चित्र दिखाई देता है, वैसे ही यहाँ भी दिखाई देगी। आज नहीं तो कल, कल नहीं तो परसों, परसों नहीं तो अगले मास, अगले वर्ष या उससे अगले वर्ष अथवा अगले जन्म में।

जब कोई कहता है कि मैं आँखें बन्द करके बैठा तो था, कई दिन, कई सप्ताह बैठा रहा परन्तु मुझे कुछ दिखाई नहीं दिया, तो हम समझ लेते हैं कि या तो उस व्यक्ति ने ठीक प्रकार से आँखें बन्द नहीं कीं या ठीक प्रकार से ध्यान नहीं जमाया। ध्यान के बिना तो कुछ नहीं होता। यह मन है न! इससे बड़ा कारीगर संसार में कभी उत्पन्न नहीं हुआ। इधर आप आँखें बन्द करके बैठिये, उधर यह बिना सिमेंट के, बिना गारे और ईंट के भवन बनायेगा, महल बनाने लगेगा, नगर बनायेगा। उन नगरों में यह सड़कें बना देता है। सड़कों पर मोटरें दौड़ा देता है। मोटरों की टक्करें भी करा देता है। अद्‌भुत कारीगर है यह! किन्तु वस्तु की इसको आवश्यकता नहीं। सब–कुछ यह अपने पास से पैदा कर लेता है।

परन्तु उसके लिए करता है जिन्होंने जीवनभर इसे वश में नहीं किया, इसे मर्यादा में रहना नहीं सिखाया, संसार में रहने की विधि नहीं सिखाई।

एक चेला था। उसने अपने गुरु से पूछा, "महाराज! संसार में रहने का ढंग क्या है?" गुरु ने कहा, "अच्छा प्रश्न किया है तूने। एक–दो दिन में उत्तर देंगे।"

दूसरे ही दिन गुरु जी के पास एक व्यक्ति कुछ फल और मिठाइयाँ लेकर आया, सब वस्तुएँ महात्मा जी के सामने रखकर उन्हें प्रमाण किया, उनके पास बैठ गया। महात्मा ने उस व्यक्ति से बात भी नहीं की। पीठ मोड़ी, सब–के–सब फल खा लिये। मिठाई भी खा ली। वह व्यक्ति सोचता रहा, "यह विचित्र साधु है। वस्तुएँ तो सब खा गया परन्तु मैं जो सब–कुछ लाया हूँ मेरी ओर देखा ही नहीं।' अन्त में क्रुद्ध होकर उठा, चला गया। उसके जाने के पश्चात् महात्मा ने चेले से पूछा, "क्यों भाई! क्या कहता था वह व्यक्ति?"

शिष्य ने कहा, "महाराज! वह तो बहुत क्रुद्ध था। कहता था, मेरी वस्तुएँ खा लीं, मुझसे बोले भी नहीं।" महात्मा बोले, "तो सुन, संसार में रहने का यह ढंग नहीं, कोई दूसरा ढंग सोचना चाहिए।"

थोड़ी देर पश्चात् एक दूसरा व्यक्ति आया। वह भी फल और मिठाइयाँ ले आया। फल और मिठाइयों को साधु के सामने रखकर बैठ गया। साधु ने फल और मिठाइयों को उठाया, साथ वाली गली में फेंक दिया और उस व्यक्ति से बड़े प्यार और सम्मान के साथ बातें करना लगा, "कहो जी, क्या हाल है? परिवार तो अच्छा है? कारोबार तो अच्छा है? बच्चे ठीक हैं? पढ़ते हैं न? बहुत अच्छा करते हो, उन्हें खूब पढ़ाओ। तुम्हारा अपना शरीर तो ठीक है? मन तो प्रसन्न रहता है? भगवान का भजन तो करते हो? शरीर अच्छा हो, चित्त प्रसन्न हो और प्रभु–भजन में मन लगे तो फिर मनुष्य को चाहिए क्या?" इस प्रकार की मीठी–मीठी बातें करता रहा और वह व्यक्ति मन–ही–मन कुढ़ता रहा, 'यह विचित्र साधु है! मुझसे तो मीठी बातें करता है, मेरी वस्तुओं का इसने अपमान कर दिया, इस प्रकार फेंक दिया उन्हें जैसे उनमें विष पड़ा हो।'

वह भी चला गया तो महात्मा ने पूछा, "महात्मा ने पूछा, "क्यों भाई! यह तो प्रसन्न हो गया?"

शिष्य ने कहा, "नहीं महाराज। यह तो पहले से भी क्रुद्ध था। कहता था मेरी वस्तुओं का अपमान कर दिया।" महात्मा बोले, "तो सुन भाई! संसार में रहने का यह ढंग भी ठीक नहीं, अब कोई और विधि सोचनी होगी।"

तभी एक सज्जन वहाँ आये। वे भी फल और मिठाई लाये, साधु के समक्ष रखकर बैठ गये। साधु ने बहुत प्यार से उसके साथ बात की। उन वस्तुओं को आसपास बैठे लोगों में बाँटा। कुछ मिठाई उस व्यक्ति को भी दी, कुछ स्वयं भी खाई। उसके घर–बार और परिवार की बातें करते रहे। उसे सुन्दर कथाएँ सुनाते रहे। अन्त में वह भी गया तो महात्मा ने पूछा, "क्यों भाई! वह व्यक्ति क्या कहता था?"

शिष्य ने कहा, "यह तो बहुत प्रसन्न था महाराज! आपकी बहुत प्रशंसा करता था। कहता था, ऐसे व्यक्ति से मिलकर चित्त प्रसन्न हो गया है।" महात्मा बोले, "तो सुन बेटे! संसार में रहने का ढंग यही है।"

देखो, यह जो कुछ तुम्हारे पास है, सब–कुछ प्रभु का दिया हुआ है। ये भाँति–भाँति के फल, मिठाइयाँ, नाना प्रकार के सुख–साधन सबको प्रदान करने वाला वही है। इन्हें तो तुम भोगते रहो और भगवान् से बात भी न करो तो यह गलत है। यह संसार में रहने की विधि नहीं। और यदि तुम इन सब वस्तुओं को लात मार कर, सिर में राख डालकर, शरीर में भस्म रमाकर, वैरागी बनकर किसी वन में जा बैठो और प्रभु को इस प्रकार स्मरण करना शुरू कर दो कि उसे चैन ही न लेने दो तो यह भी ठीक नहीं। यह भी संसार में रहने का ढंग नहीं।

संसार में रहने का ठीक ढंग यह है कि प्रभु ने जो कुछ दिया है उसे बाँटकर खा, त्यागभाव से भोग और इसके साथ–ही–साथ भगवान् से प्यार भी कर। उससे बातें कर। उसके नाम का जाप कर। उसका ध्यान कर।

यह है प्राण और अन्न, दोनों को मिलाने का 'दर्शन'। यह है अध्यात्मवाद और मायावाद, दोनों को साथ–साथ चलाने की विधि। यह है चमकते हुए सोने के नीचे छिपे हुए सत्य को खोजने और उसके दर्शन करने का मार्ग। यह है जीवन के इस घोर जंगल में उस ज्योति को पाने का मार्ग जिसे पाये बिना मनुष्य को कभी सच्ची शान्ति नहीं मिलती।

और यदि प्रयत्न करने पर भी यह मार्ग न मिले, यदि इस घोर घने जंगल में अन्धकार ही दिखाई दे तो घबराओ नहीं। इस उपनिषद् के पाँचवें अध्याय का पन्द्रहवां ब्राह्मण कहता है– यदि हमें सफलता न मिले तो जोड़ दो दोनों हाथ, झुका दो अपना मस्तक और पुकारकर कहो–

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम।।

'हे महाराज! मुझे पता नहीं कल्याण का मार्ग किधर है। तू ही ले चल, जहाँ तू ले चलता है, जिधर से चाहता है। मैंने अपने–आपको तेरे अर्पण कर दिया। प्रभो! मेरी शक्ति तो समाप्त हो चुकी है। मैं इस घोर घने जंगल में मार्ग ढूँढ नहीं पाता। मैं कुछ नहीं जानता। तू ही ले चल–

प्रभु आपकी हूँ मैं शरण, निज चरण–सेवक कीजिये।
मैं कुछ नहीं हूँ माँगता, जो आप चाहें दीजिये।।
सिर–आँख से मंजूर है, सुख दीजिये दुख दीजिये।
जो हो इच्छा कीजिये, पर दूर न दर से कीजिये।।

पड़ा रहने दो माँ! पड़ा, रहने दो अपनी चौखट पर। अच्छा हूँ, बुरा हूँ, जो भी कुछ हूँ, तेरा हूँ–

सूरत करो मेरे साइयाँ, हम हैं भौ–जल माँह।
निश्चय ही बह जायेंगे, जो नहीं पकड़ो बाँह।।
औगुण मेरे बाप जी, बख़्श गरीबनवाज।
जो मैं पूत कपूत हूँ, तोऊ पिता को लाज।।
तुम तो समरथ साइयाँ, दृढ़ कर पकड़ों बाँह।
मंजिल पर पहुँचाइयो, राह में छोड़ो नाँह।।

क्रमशः–

स्वास्थ्य चर्चा

आयुर्वेद में कुछ नियमों के अनुसार खाद्य सामग्री ''निषेध'' भी है।

1. मूली, दही, पनीर साथ–साथ नहीं खाने चाहियें
2. नींबू, जामुन, सिरका साथ–साथ नहीं खाने चाहिये
3. अरबी, उड़द, भिण्डी साथ–साथ नहीं खाने चाहियें।
4. खरबूजा, दही, मट्ठा साथ–साथ नहीं खाने चाहिएँ।
5. दही, करेला साथ–साथ निषेध है।
6. पका केला, छाछ निषेध है।
7. उड़द की दाल और गर्म दूध निषेध है।
8. शहद और घी निषेध है।
9. शहद, मूली निषेध है।
10. दही और आम का आचार निषेध है।
11. उड़द की दाल की खिचड़ी के साथ शहद का प्रयोग न करें।
12. खरबूज़े के साथ गर्म दूध का प्रयोग न करें।

कृष्ण मोहन गोयल
113–बाजार कोट
अमरोहा

www.thearyasamaj.org

बृहदारण्यकोपनिषद्

प्रजापति का अपनी प्रजाओं के प्रति 'द' उपदेश

● प्रो. ओमकुमार आर्य

वेद ईश्वरीय ज्ञान है और वेद के ही शब्दों में **यथेमां वाचं कल्याणीवदानि जनेभ्यः** [यजुः 26/6] यह ईश्वर की कल्याणी वाणी है जिसका उपदेश परमपिता परमेश्वर ने बिना किसी भेदभाव के मनुजमात्र के हित, कल्याण, सुख, शांति एवं आनन्द के लिये किया है। यह 'अभ्युदय' और 'निःश्रेयस', दोनों की सिद्धि हमें करवाती है। वेद चूंकि मंत्र रूप में प्रकाशित हुए थे अतः उनकी व्याख्या, मंत्रों का अर्थ, अर्थ का विस्तार आदि बाद के समय में होता गया। आरण्यक, ब्राह्मण, उपनिषद्, सूत्रादि ग्रंथों में वेदार्थ के रहस्यों को सरल बनाकर समझाया गया। ऐसा करते समय ऋषियों ने कथा, कहानी, आख्यान, उपाख्यान, प्रश्नोत्तर, संवाद आदि-आदि का आवश्यकतानुसार भरपूर उपयोग किया। वेदों ने **'मनुर्भव, जनया दैव्यं जनम्'** [ऋक् 10/53/6] कहकर मनुष्य बनने पर और जोर दिया [दैवी गुणों से युक्त] संतान उत्पन्न करने पर जोर दिया, **'मा गृधः कस्य स्विद्धनम्'** [यजुः 40/1] कहकर राक्षसी (आसुरी) दुष्प्रवृत्तियों को दूर भगाने, उनसे बचे रहने का सदुपदेश दिया और इसी प्रकार **'उलूक यातुं शुशुलूक यातुं जहिश्वयातुम्'** [ऋग्वेद 7.104.22] के माध्यम से पशु-सुलभ दुर्गुणों को पास तक न फटकने देने की शिक्षा दी। उपर्युक्त सुप्रवृत्ति, प्रवृत्ति एवं दुष्प्रवृत्ति ही क्रमशः हमें देव, मनुष्य या फिर असुर। राक्षस बनाती है। मनुष्य का उत्थान या पतन उसमें पनपने वाली प्रवृत्ति या दुष्प्रवृत्ति का ही तो परिणाम है, उसके मन में पाये जाने वाले 'शिव' या 'अशिव' संकल्प की ही स्वाभाविक परिणति हैं (द्रष्टव्य यजुः 34/1-6' शिव-संकल्प वाले मंत्र)।

इसी संदर्भ में बृहदारण्यकोपनिषद् के अंतर्गत अध्याय 5 ब्राह्मण 2 (काण्डिका 1-3) में आये प्रजापति के 'द' उपदेश का अनन्य-साधारण महत्त्व है। प्रजापति ने उक्त 'द' उपदेश अपनी दैवी, मानुषी और आसुरी/राक्षसी प्रजा को दिया है जिसकी प्रासंगिकता, उपादेयता सदाबहार तो है ही, साथ ही सार्वकालिक और सार्वभौमिक भी है। वेद की इन्हीं विशेषतओं के चलते पौर्वात्य एवं पाश्चात्य विद्वानों ने वैदिक विचारधारा, वैदिक मान्यताओं और वैदिक दर्शन को 'द फिलोसोफिया पिरैनिस (Philosophia perennis) अर्थात् शाश्वत, सनातन, सत्य (ऋत) एवं नित्य कहा है। कुछ मंदबुद्धि, दुराग्रही तथा-कथित संत एवं स्वयंभू, स्वघोषित विद्वान् (वास्तव में अविद्वान्) वेद के विषय में अनर्गल एवं मिथ्या दुष्प्रचार करते रहते हैं जो कि पूरी तरह निराधार, बेतुका, अप्रामाणिक एवं निरर्थक प्रलाप मात्र है, अन्य कुछ भी नहीं है।आइये प्रजापति के 'द' उपदेश की ओर लौटें। उपनिषद् कहती है कि एक बार देव, मनुष्य और दानव/असुर तीनों मिलकर प्रजापति के पास गये और प्रार्थना की कि उन्हें उपदिष्ट करें। प्रजापति ने कहा कि कुछ समय तप करो, फिर आना हम तुम्हें उपदेश देंगे सो तप करने के पश्चात् सबसे पहले देव प्रजापति की शरण में गये और कहा कि हमें उपदेश देवें **'देवाः ऊचुः नः ब्रवीतु'** (देव बोले भगवन् हमें उपदेश देवें)

प्रजापति ने कहा **'द इति'** और पूछा समझ गये, हमने क्या उपदेश दिया है। देवों ने उत्तर दिया, हाँ, हम समझ गये **द-दाम्यतेति** अर्थात् हमें आत्मानुशासन, संयम, दमन के द्वारा सदैव दुष्ट प्रवृत्तियों पर काबू रखना चाहिये ताकि हमारा 'देवत्व' बरकरार रहे।

फिर मनुष्य गये, प्रार्थना की, भगवन् उपदेश दीजिये। प्रजापति ने उसी 'दकार' को दोहराया कि **'द'** और पूछा, समझ गये, हमने क्या कहा? मनुष्य बोले, हाँ महाराज समझ गये **द-दत्तेति,** अर्थात् दान करो। दानभावना के अभाव में मनुष्य समाज न एक क्षण टिक पायेगा न चल पायेगा, चारों ओर अव्यवस्था फैल जायेगी। तदन्तर असुर/दानव प्रजापति के पास गये और उपदेश में **'अथ हैनमसुरा ऊचुर्ब्रवीतु नो भवानिति'** अर्थात् हमें भी उपदेश देवें प्रजापति ने फिर अपना वही उपदेश-दकार-दोहराया - 'द' और पूछा कि समझ गये, हमने क्या कहा? असुर बोले हाँ, भगवन्हम समझ गये **द - दयध्वमेति** = दया करो, रहम करो, हृदय में अन्यों के प्रति करुणा का भाव जगाओ। जो मिला उसी को नोच खाया, मार दिया, उदरस्थ कर लिया, त्यागो इस दुष्ट प्रवृत्ति को, यही है तुम्हारे लिये उपदेश, इसी में तुम्हारा कल्याण।

अब देखिये 'दैवी वाक् = उपदेश एक ही है - **द, द, द,**

दैवी प्रजा भी एक है, प्रवृत्ति भेद से वही 'देव' है वही 'मनुष्य' है वही 'असुर' है। इसलिये अपने-अपने हित के लिये' रुचि वैचित्र्य के अनुसार अर्थ में भेद कर लिया गया क्योंकि उपदेश लेने वाले जानते थे कि यही अलग-अलग अभिप्राय उनके लिये है। अर्थात् देवसृष्टि के लिये द = दाम्यत = आत्मानुसार, इंद्रिय-दमन।

मनुष्य सृष्टि के लिये द = दत्त, दान भावना बनाये रखो।

असुरों के लिये द = दयध्वम् = दया भाव, करूणा, मन में रखो ताकि असुरत्व से मुक्त हो सको, मनुष्यत्व और देवत्व की ओर अग्रसर हो सको। प्रजापति के इस 'द' उपदेश की जितनी प्रासंगिकता, उपादेयता, आवश्यकता आज है उतनी अतीत में संभवतः पहले कभी नहीं रही होगी। आज जो बुद्धिजीवी वर्ग समाज के मुखिया, देशों के कर्णधार जिन्हें 'देव कोटि' में होना चाहिये था वे सब भयंकर भ्रष्टाचार, अनाचार, घपले, घोटालों में न केवल संलिप्त हैं, बल्कि इन सब बुराइयों के जनक, संरक्षक एवं सम्पोषक बने हुये हैं, जिनके चलते आम आदमी का जीना दूभर हो गया है। जिन्हें एक आम आदमी की तरह एक सुखी, संतुष्ट, शांत जीवन जीना चाहिये था वे सभी मनुष्य भी अत्यधिक लोभ, लालच, संग्रह, संचय, परिग्रह आदि विकारों से ग्रस्त हैं। फलतः स्वयं भी त्रस्त हैं, अन्यों को भी त्रास दे रहे हैं। जिनकी मानसिकता, प्रवृत्तियाँ, जीवन शैली पहले से ही राक्षसी हैं, आसुरी हैं, खूंख्वार एवं हिंसक हैं वे भी अपने सुधार का कोई उपाय नहीं करना चाहते। इन सबके (देव, मनुष्य, असुर = स्वभाव एवं प्रवृत्ति की अपेक्षा से) आचरण का जो दुष्परिणाम हमारे सामने है, उसका सही और सटीक वर्णन कवि की ये पंक्तियाँ कर रही है-

हृदय-हृदय के बीच खाइयाँ, लहू
बिछा मैदानों में,
घूम रहे हैं युद्ध सड़क पे, शांति छुपी
श्मशानों में
जंजीरें कट गई मगर आजाद नहीं
इन्सान अभी
दुनिया भर की खुशी कैद है चांदी
जड़ मकानों में

देवों के अभर्यादित आचरण, मनुष्यों की कृपणतापूर्ण परिग्रहवृत्ति एवं असुरों की अतिशय क्रूरता को देखकर कवि आने वाले 'कल' के डरावने रूप की कल्पना करके सिहर उठता है, और कहता है-

मैं सोच रहा हूँ अगर तीसरा युद्ध
छिड़ा
इस नई सुबह की नई फसल का क्या
होगा
मैं सोच रहा हूँ गर धरती से उगा खून
मासूम हलों का चहल पहल का क्या
होगा

इस संभावित त्रासदी को टालने का यदि कोई उपाय है तो मात्र और मात्र वैदिक विचारधारा के पास है, ऋषियों के चिंतन और आर्ष दर्शन के पास है जिसका एक सुखद उदाहरण प्रजापति का अपनी प्रजाओं के प्रति प्रस्तुत **द-द-द** उपदेश है। जो गरजती मेघमालाओं की गर्जना में सतत् गूञ्ज रहा है, जल-धाराओं के कल-कल निनाद में जिसकी अनुगूञ्ज है, तीव्र झंझावत, तूफानी हवाओं, प्रकृति की हलचल में सदा जो सर्वत्र विद्यमान है **द-द-द**। आइये, इस उपदेश को समझें, अपने वर्तमान को सुधारें, सुखी और सुरक्षित भविष्य का पथ प्रशस्त करें। फिर देखें, क्या तात्पर्य हे **द-द-द** से

प्रजापति बोले देवों से 'द' पथ का अनुगमन करो।
देवत्व बनाये रखने को, दुष्प्रवृत्तियों का दमन करो।।
मनुष्यों से भी यही कहा कि तुम भी 'द' को अपनाओ।
दान करो और सुखी रहो, अन्यों को सुख पहुंचाओ।।
असुरों के लिये भी प्रजापति ने फिर दोहराया वही दकार।
दया करो, दया करो, दयध्वम् से संभव उद्धार।। = **द-द-द**
दाम्यत, दत्त, दयध्वम्=देव,मनुष्य, असुर

1607 जवाहर नगर,
पटियाला चौक
जीन्द (हरियाणा)

मृत्यु और जन्म

● श्री हरिश्चन्द्र वर्मा 'वैदिक'

मृत्यु के पश्चात् क्या होता है कोई नहीं जानता। चाहे वह पापी हो या धर्मात्मा, उसका भी कोई पता नहीं कि क्या होता है। किन्तु यह सत्य है कि किसी भी– पदार्थ के नष्ट हो जाने से, जिससे उसका निर्माण हुआ था उसके उपादान परमाणु का नाश नहीं होता।

यहाँ विचारणीय विषय यह है कि शरीरधारी प्राणी तो कोई जड़ पदार्थ नहीं है और जड़ पदार्थ तब तक नहीं है जब तक उसमें ज्ञातृत्व, कर्त्तव्य और भोक्तृत्व के गुण विद्यमान रहते हैं। अब विचार करना है कि सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, प्रेम, ममत्व, अनुभव, स्मरण तथा ज्ञानेन्द्रियों से ज्ञान को मस्तिष्क साधन से कौन करता है? निश्चय ही कोई चेतना शक्ति है जो शरीर द्वारा भले बुरे कर्मों के अनुसार सुख–दुःखों को भोगता एवं अनुभव करता रहता है। इन व्यवहारों से सिद्ध हो जाता है कि यह चेतना सत्ता आत्मा जड़ पर परमाणुओं से भिन्न एक ऐसा अतिसूक्ष्म अमिश्रित द्रव्य अणु है जिसमें ज्ञातृत्व का गुण बीज रूप से विद्यमान होता है। जब उसका शरीर क्षेत्र के अणुओं से सम्बन्ध होता है तब उस बीज रूपी आत्मा से वृक्षाकार रूपी उसके ज्ञातत्व आदि गुण प्रकट होने लगते हैं। तात्पर्य यह कि आत्मा के सूक्ष्म शरीर से बने हुए स्थूल शरीर के सारे उपकरण जड़ हैं, यह सब तब प्रतीत होता है जब जीवन शक्ति ज्ञातत्व गुण वाला आत्मा इस देह से निकल जाता है तब उसके सारे साधन जड़ हो जाते हैं।

इस घटना से सिद्ध हो जाता है कि शरीर के केन्द्र में कोई ऐसी शक्ति थी जिसके रहने से शरीर पवित्र था और जब नहीं रहा तब यह अपवित्र हो गया जड़ पदार्थ और शरीरधारी प्राणी में यही अन्तर है। जड़ में ज्ञान करने, कर्म करने और सुख दुःख अनुभव करने की शक्ति नहीं होती, पर मानव का मस्तिष्क दसों इन्द्रियों से युक्त होने से इस– "एष हि द्रष्टा स्पृष्टा श्रोता घ्राता रसयिता मन्ता बोद्धा कर्त्ता ज्ञानात्मापुरुषः।" (प्रश्नोपनिषद्) आत्मा के उन साधना से सारे गुण प्रकट होने लगते हैं। परन्तु यह चेतना और ज्ञान प्रकृति का गुण नहीं है। प्रकृति तो उस आत्मा का साधनमात्र है। (जैसे कहीं जाना होता है तो पैरों से चलकर जाया जाता है, पैर साधन हैं और जाने की प्रेरणा देने वाला उनसे अलग मैं हूँ। जैसे कुछ, बोलना होता है तो साधन कंठ और मुख में जो जिह्वा है उनके माध्यम से बोलता हूँ। और मस्तिष्क द्वारा अपना विचार प्रकट करता हूँ अतः यह 'मैं' एक विश्वव्यापी शब्द है। मैं के अर्थ दो हैं। एक यह मैं हूँ जो दिखता हूँ, पर एक और 'मैं' हूँ जो दिखता नहीं हूँ।

कुछ व्यक्तियों का विचार है कि इस शरीर में जो ऊर्जा है वही आत्मा है, परन्तु ऐसी बात नहीं है। चेतन और ऊर्जा दो भिन्न तत्त्व हैं। ऊर्जा प्राण की ही शक्ति है। प्राण जड़त्व है, जड़ तत्त्व से चेतन तत्त्व की उत्पत्ति कभी नहीं हो सकती। (आज जितने इलेक्ट्रिक यन्त्र–कम्प्यूटर, आदि का निर्माण हुआ है उनमें से किसी में भी चेतना का गुण नहीं है और न उन्हें सुख दुःख का अनुभव होता है। उनमें जैसा फार्मूला लगाया गया है वे उसी प्रकार कार्य करते हैं। वे स्वयं नहीं बने हैं, उन्हें बनाने वाला किसी वैज्ञानिक का आत्मा ही है।

इस शरीर में ऊर्जा शक्ति तभी तक कार्य करती है जब तक प्राण के साथ जीवात्मा का संयोग रहता है और जब शरीर रोग से अतिक्षीण हो जाता है, अथवा हृदय की गति बन्द हो जाती है तब आत्मा का शरीर से सम्बन्ध छूट जाता है और वह पुनः प्राणतत्त्व में मिल जाता है। उसका नाश नहीं होता। शरीर का नाश होता है। जैसे दीपक के बुझ जाने से वायु का, और मशीन के नष्ट हो जाने से बिजली का नाश नहीं होता वैसे ही शरीर के नष्ट हो जाने से उसके कर्त्ता आत्मा का नाश नहीं होता। वह अपनी सूक्ष्म शरीर की शक्तियों को समेट कर वायु से अतिसूक्ष्म प्राणतत्त्व में मिल जाता है। पुनः उसी के माध्यम से भाग्यशाली जीव माता के अण्डदानी में प्रवेश कर गर्भाथान का कार्य कारण बन जाता है। जब भ्रूण में आत्मा का संयोग हो जाता है तब कुछ समय बाद उसमें नाड़ी गति के अनुसार हरकत उत्पन्न होने लगती है। उस हरकत स्थान में उसका हृदय बनने लगता है। पश्चात् उसकी गति की तीव्रता से उसके सारे अंग बनने लगते हैं, और जब बन जाते हैं तब उस शिशु की हृदय की गति स्वाभाविक एक खास मात्रा के नियम में चलने लगती है। यह तमाम क्रिया–शिशु का पालन पोषण नौ मास नौ दिन तक गर्भ में प्राण के द्वारा ही होता है।

प्रश्नोपनिषद् के ऋषि कहते हैं कि– **'प्रजापतिश्चरसिगर्भे त्वमेवप्रतिजायसे तुभ्य प्राणः।**

व्याख्या–शरीरान्तर्भत गर्भ की स्थापना का कारण प्राण है। यदि रज और वीर्य के साथ प्राण न मिले तो गर्भ की स्थापना नहीं हो सकती। प्राण के ही कारण गर्भ की वृद्धि होती है और प्राण के ही आश्रय से बालक की उत्पत्ति होती है।

परमात्मा की बड़ी विचित्र रचना है। इधर शरीर को ऑक्सीजन न मिलने से वह जीवित नहीं रह सकता। परन्तु उधर बिना श्वास–प्रश्वास के केवल सूक्ष्म शरीर के प्राण द्वारा गर्भ में माता से रसरक्त शिशु को नाभिनल द्वारा प्राप्त होता रहता है और विष्णु क्रिया की शक्ति से वह पलता रहता है।

आगे प्रश्नोपनिषद् के ऋषि कहते हैं कि– **आत्मनः एष प्राणी जायते यथैषा पुरुषे छायैतस्मिन्नत दाततं।**

व्याख्या– प्राण सूक्ष्म शरीर का एक अंग है। सूक्ष्म शरीर के साथ आत्मा स्थूल शरीर में प्रविष्ट हुआ करता है। इसलिए इस स्थूल शरीर में प्राण की उत्पत्ति का निमित्त आत्मा को बतलाया गया है। प्राण शरीर के देश विशेष में नहीं रहता किन्तु सारे शरीर में छायावत् फैला रहता है। और एक बात यह है कि कोई भी अणु–परमाणु जीवात्मा नहीं है, न हो सकता है क्योंकि वह ऐसा एक अतिसूक्ष्म तत्त्व है जिसमें जानने, क्रिया करने आरै सुख–दुःख भोगने की शक्ति होती है। इसके अलावा जितने मृत शरीर के आत्मा हैं वे संस्कार के कारण एक जैसे नहीं होते। जैसे मनुष्यों के रूप और अंगूठे के निशान एक जैसे नहीं होते वैसे ही आत्मा भी संस्कार के कारण एक स्वभाव के नहीं होते। अतः हिंसक आदि संस्कार वासना में ही उन स्वच्छ आत्माओं को विभिन्न स्वभावों से आच्छादित किए रहते हैं। जब जन्म लेकर बालक कुछ बड़े हो जाते हैं तभी उनके जन्मगत गुणों का पता चलता है। प्राण के माध्यम से (मृत्यु के पश्चात्) जो जिस प्रकृति का रहता है उसे उसी योनि में जाने की व्यवस्था 'सत्यराजन' के न्याय व्यवस्था के अनुसार ही होती है।

जब शिशु का माता के गर्भ से जन्म लेने का समय आता है तो एक प्रकार दर्द उत्पन्न होता है और उस अत्यन्त वेदना को सहन करती हुई माता अपने बच्चों को जन्म दे देती है। (किन्तु आज कल की माताएं प्रसव पीड़ा सहन करने में असमर्थ होती हैं, इसलिये 'सीजर' पेट काटकर बच्चे को निकाला जाता है, और अनेक प्रकार के औषधियों के सेवन से 'माँ' के स्तन में पर्याप्त मात्रा में दूध शिशु को नहीं मिलता। किसी किसी को तो दूध ही नहीं होता, बालक को ऊपरी दूध से पालन किया जाता है।)

जब शिशु का जन्म हो जाता है तब वह जब तक नहीं रोता, तब तक मूर्छितावस्था में रहता है, परन्तु नर्स या दाई के प्रयत्न से जब वह रोने लगता है तब श्वांस लेने लगता है और दुःख टल जाता है। ऐसी घटना सब बच्चों में नहीं होती। किसी–किसी शिशु के दुर्बल या अन्य किसी कारण से हो जाता है।

जैसे शब्द का वाहक वायु होता है वैसे ही मृत्यु के बाद आत्मा का वाहक सूक्ष्म शरीर का प्राण होता है। जैसे एक का शब्द दूसरे के कान में प्रवेश करता है वैसे ही प्राण के ही माध्यम से आत्मा माता के भ्रूण में प्रवेश कर जाता है।

इस प्रकार जैसे सूर्योदय के पीछे अस्त का और अस्त के पीछे उदय का क्रम चल रहा है वैसे ही जन्म के पीछे मृत्यु का और मृत्यु के पीछे जन्म का होना सत्य सिद्ध हो रहा है।

उदाहरण के लिये– 1–2 मास के शिशु से पता चलता है कि उसकी आत्मा किसी दूसरे शरीर से आई है क्योंकि उसने जो पूर्व में सुख–दुःख भोगा था वह इस जन्म में उसके रोने और हँसने जैसी हरकत करने से पता चलता है। अतः जब तक उसके मस्तिष्क के स्नायु कोमल रहते हैं तभी तक उसमें पूर्व के संस्कार भासित रहते हैं और जब उसके स्नायु सबल हो जाते हैं तब उसे पूर्वाभास नहीं होते। – वह अब इस जन्म के माता पिता को ही अपना समझने लगता है।

मु. पो. मुरारई, जिला–वीरभूम (प. बंगाल) 731210
मो. 9046773734

व्याख्या– प्राण सूक्ष्म शरीर का एक अंग है। सूक्ष्म शरीर के साथ आत्मा स्थूल शरीर में प्रविष्ट हुआ करता है। इसलिए इस स्थूल शरीर में प्राण की उत्पत्ति का निमित्त आत्मा को बतलाया गया है। प्राण शरीर के देश विशेष में नहीं रहता किन्तु सारे शरीर में छायावत् फैला रहता है। और एक बात यह है कि कोई भी अणु–परमाणु जीवात्मा नहीं है, न हो सकता है क्योंकि वह ऐसा एक अतिसूक्ष्म तत्त्व है जिसमें जानने, क्रिया करने आरै सुख–दुःख भोगने की शक्ति होती है। इसके अलावा जितने मृत शरीर के आत्मा हैं वे संस्कार के कारण एक जैसे नहीं होते। जैसे मनुष्यों के रूप और अंगूठे के निशान एक जैसे नहीं होते वैसे ही आत्मा भी संस्कार के कारण एक स्वभाव के नहीं होते। अतः हिंसक आदि संस्कार वासना में ही उन स्वच्छ आत्माओं को विभिन्न स्वभावों से आच्छादित किए रहते हैं। जब जन्म लेकर बालक कुछ बड़े हो जाते हैं तभी उनके जन्मगत गुणों का पता चलता है। प्राण के माध्यम से (मृत्यु के पश्चात्) जो जिस प्रकृति का रहता है उसे उसी योनि में जाने की व्यवस्था 'सत्यराजन' के न्याय व्यवस्था के अनुसार ही होती है।

www.thearyasamaj.org

संकल्प शक्ति का चमत्कार

● महात्मा ओममुनि

प्रत्येक मानव के व्यक्तित्व और उसकी सफलता के पीछे मुख्य भाग उसकी संकल्प शक्ति का ही होता है। बिना संकल्प शक्ति के किसी भी कार्य में सफलता प्राप्त करना सम्भव नहीं है। केवल दृढ़ संकल्प शक्ति से एक से बढ़कर एक चमत्कार दिखलाये जाते हैं। संकल्पशक्ति ही मनुष्य के जीवन में उन्नति और अवनति का कारण होती है। उपनिषद् की श्रुति के अनुसार, 'संकल्पमयोऽयं पुरुषः' अर्थात् मनुष्य संकलप से युक्त बना हुआ है। मनु का कथन है–

संकल्पमूलः कामो वै यज्ञः संकल्पसम्भवः। व्रतनियमधर्मश्च सर्वे संकल्पजाः स्मृताः।

अर्थात् सब प्रकार की कामनाओं का मूल यह संकल्प है। यज्ञ संकल्प से उत्पन्न होता है। व्रत–नियम–धर्म सब इसी संकल्प से उत्पन्न होने वाले माने गए हैं।

आज हमें जितने भी महापुरुष दिखाई पड़ते हैं, जिनका नाम संसार में आदर से लिया जाता है, उनके जीवन को उच्च और पवित्र बनाने का कारण संकल्प शक्ति ही है। यजुर्वेद के 34वें अध्याय के छः मन्त्रों में बार–बार यही प्रार्थना की गई है– "तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु" अर्थात् मेरा यह मन पवित्र व शुभ संकल्प वाला हो। जैसे–

ओ३म् यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति।

दुरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।1।।

जो दिव्य मन जाग्रत अवस्था में दूर निकल जाता है और इसी प्रकार सोने की दशा में भी बहुत दूर जाने वाला है। ज्योतियों की ज्योति अर्थात् इन्द्रियों का प्रकाशक मेरा मन शुभ संकल्पों वाला हो।

ओ३म् येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः।

यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।2।।

कर्मशील, मनीषी, धीर पुरुष जिसके द्वारा परोपकार क्षेत्र में तथा जीवन संघर्ष में बड़े–बड़े कार्य कर दिखाते हैं, जो समस्त प्रजाओं (इन्द्रियों) के अन्दर एक अपूर्व पूज्य सत्ता है, वह मेरा मन शुभ संकल्पों वाला हो।

ओ३म् यत् प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु।

यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते। तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।3।।

जो नये–नये अनुभव करता है, जो समस्त इन्द्रियों के अन्दर एक अमरज्योति है, जिसके बिना कोई कर्म नहीं किया जा सकता, वह मेरा मन शुभ संकल्पों वाला हो।

ओ३म् येनेदं भूतं
भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम्।
येन यज्ञस्तायते सप्त होता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।4।।

जिस अमृत मन के द्वारा यह भूत, भविष्यत् तथा वर्तमान जाना जाता है, वह मेरा मन शुभ संकल्पों वाला हो।

ओ३म् यस्मिन्नृचः साम यजूँषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः।

यस्मिँश्चित्तँसर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।5।।

जिसमें ऋचाएँ, साम यजुर इस प्रकार टिके हुए हैं जैसे रथ की नाभि में अर, जिसमें इन्द्रियों की सारी प्रवृत्ति रहती है, वह मेरा मन शुभ संकल्पों वाला हो।

ओ३म् सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान् नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिनऽइव।

हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।6।।

अच्छा सारथी जिस प्रकार वेगवान् घोड़ों को बागों से पकड़कर चलाता है, उसी प्रकार जो मनुष्यों को लगातार चलाता रहता है, जो हृदय में रहने वाला है, वो मेरा मन शुभ संकल्पों वाला हो।

प्रारब्ध कर्म संकल्प द्वारा ही क्रियमाण होते हैं, जैसे कहा जाता है– 'विनाशकाले विपरीत बुद्धि, 'इसलिए मनुष्य यदि अपने संकल्पों को विशुद्ध रखे और जब वह मलिन व अपवित्र होने लगे तब यह जानकर कि मुझपर कोई विपत्ति आने वाली है, तत्काल अपने संकल्प और विचारों को शुद्ध और पवित्र बना ले तो दुर्भाग्य उसे कभी भी भयभीत नहीं कर सकेगा। यदि पवित्र विचारों वाले मनुष्य पर अचानक कोई विपत्ति आ भी जाये तो उस बोझ को दूसरे लोग सहायक बनकर बाँट लेते हैं अर्थात् उसके सहायक बन जाते है। इसके विपरीत बुरे व्यक्ति पर आए संकट में कोई सहायक नहीं बनता अपितु उल्टे बढ़ाने वाले अनेक हो जाते हैं। जो मनुष्य अपने जीवन में दुःखों को कम करने की इच्छा करता है तो उसको चाहिए कि वह अपनी संकल्प शक्ति में वृद्धि करे और उसका सदुपयोग करना सीखे।

उगते हुए नए पौधे को उखाड़ना आसान है, किन्तु उसके बड़ा वृक्ष बन जाने पर उसे जड़ से उखाड़ना मनुष्य की शक्ति से बाहर हो जाता है। ठीक उसी प्रकार उत्पन्न होते हुए बुरे संकल्पों को उखाड़ना और उनके स्थान पर शुद्ध व पवित्र संकल्पों की रचना/निर्माण अत्यन्त सुगम होता है। अतः जो व्यक्ति उठते हुए बुरे संकल्पों को उसी समय मिटा देता है वह उससे सम्बन्धित कर्म और उसके दुःखरूपी कर्मफल से बच जाता है। इसीलिए तो वेद मन्त्रों में बार–बार प्रार्थना की गई है कि–मेरा मन पवित्र व शुभ संकल्पों वाला हो।

संकल्प विद्या की शक्ति का पूरा–पूरा अनुभव करना अत्यन्त कठिन है, क्योंकि संसार के प्रत्येक पदार्थ में ये शक्ति विद्यमान है। आज तक जितनी मानसिक शक्ति जैसे–मैस्मेरिज्म, हिप्नोटिज्म, टैलीपैथी, स्प्रिचुअलिज्म आदि मनुष्य को ज्ञात हुई है, उन सबमें यही अलौकिक शक्ति काम करती है। जल में तरगों की तरह शब्द की तरंगें भी दूर–दूर तक जाती है। आकाश के सूक्ष्म मण्डलों (ईथर) पर संकल्प की तरंगें दौड़ती है, काम करती है और दूर–दूर तक पहुँच जाती हैं। ईथर की शक्ति जो आकाश में विद्यमान है, हमारे मस्तिष्क में भी विद्यमान है। निरन्तर विचार से उसमें गति उत्पन्न होती है और वे उसी प्रकार निकलती हैं जैसे विद्युत की तरंगें निकलती है। जिन विचार तरंगों के साथ संकल्पशक्ति नहीं होती वे शीघ्र नष्ट हो जाती हैं और जिन विचार तरंगों के साथ संकल्पशक्ति का बल होता है, वे रुकावटों और विरोध के होते हुए भी उस समय तक निरन्तर दौड़ती रहती हैं जब तक उसको अनुकूल विचारों वाला मन न मिल जाए, जो उस विचार के साथ सहानुभूति और अनुकूलता रखता हो।

यदि घृणा या शत्रुता के विचार इसी संकल्पशक्ति की सहायता से किसी के लिए भेजेंगे तो वे विचार जीवित शक्ति बन जाएँगे और वे जब तक निरन्तर दौड़ते रहेंगे जब तक कि उसके मन तक न पहुँच जाएँ जिसके लिए भेजे गए थे। इसके अतिरिक्त वे अन्य बहुत से मनों के अन्दर भी अपना प्रतिबिम्ब छोड़ जाते हैं। प्रेम का जो प्रत्येक विचार बाहर जाता है, अपने परिणाम में प्रेम की पूरी शक्ति लेकर उसी के पास वापस आ जाता है, इसीलिए यह कहावत है कि–'मन का मन साक्षी है।' क्योंकि आकाश में अनेक प्रकार के विचार चक्कर लगाते रहते हैं और जिस प्रकार के विचारों की मनुष्य में ग्रहण करने की प्रकृति होती है, उसी प्रकार के विचारों को आकाश से अपनी और खींच लेता है। जैसे जितनी तरह के बीज भूमि में बोएँ जाएँगे वे सब अपने–2 अनुकूल परमाणुओं को ही भूमि से खींचेंगे। यदि कोई बुरा विचार मन में उत्पन्न हो जाएँ तो फिर उसी प्रकार के विचारों की लड़ी मन में बन जाती है और वह तब तक बन्द नहीं होती जब तक कि स्वयं मनुष्य अपनी प्रबल संकल्पशक्ति से अपने मन को उस ओर से रोक न ले। आकाश में अच्छे से अच्छे और बुरे से बुरे विचार विद्यमान हैं, केवल उन विचारों को ग्रहण करने के लिए एकाग्रचित्त से उस ओर मन को लगाना पर्याप्त है। जब तत्त्वदर्शी किसी विषय या पदार्थ पर विचार करता है, तब उसी सम्बन्ध में नई–नई बातें उसके मन में उठने लगती हैं और ये ऐसी बातें होती हैं जो स्वयं सोचने वालों के लिए भी सर्वथा नई व विस्मित/आश्चर्यजनक होती हैं।

आध्यात्म विद्या के आचार्य जब अपने किसी शिष्य से कुछ करवाना चाहते हैं, तब अपने विचारों को उसके मन में रख देते हैं। ये विचार उसके अन्दर पहुँचकर उसको वही कार्य करने की प्रेरणा करते हैं। यही मानसिक प्रेरणा है, यही गुप्त आध्यात्मिक सम्बन्ध और आत्मिक सहायता है, जो पूर्व के सन्त–महात्मा अपने शिष्यों के साथ रखते थे। यदि हम किसी के प्रति बुरे विचारों की भावना करेंगे तो वे वहाँ दुःख और घृणा के विचारों की अधिक मात्रा लेकर लौटकर हमें मिलेंगे और यदि प्रेम व स्नेह के विचार भेजेंगे तो वे भी अपना प्रभाव डालकर अधिक प्रेम उत्पन्न करेंगे। इसी कारण से हमारा मन जिससे घृणा करता है, वह भी उसी प्रकार हमसे घृणा करेगा और जिसके प्रति हम प्रेम के विचार करते हैं, उसके मन में भी हमारे प्रति प्रेम के विचार उत्पन्न होंगे। हमारे शास्त्रों में तो प्रत्येक मनुष्य को जीव मात्र की भलाई के लिए उपदेश दिया है–

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्।।

अर्थात् सभी जीवों को सुख प्राप्त हो, सब प्राणी नीरोग हों, सबका कल्याण हो, किसी को भी दुःख न हो।

जब एक मनुष्य अपने अन्दर से सभी जीवों के प्रति शत्रुता के विचार निकालकर सभी की भलाई और सबके सुख की प्रार्थना करता है, तब उसको उसके बदले में विश्वमात्र का प्रेम प्राप्त होता है और तब संसार का कोई पदार्थ उसके लिए दुःखदायी नहीं रहता।

प्रार्थना करनी चाहिए– अतः हम सब को सब की सुख–समृद्धि व शान्ति की कामना के लिए प्रातः–सायं संकल्पशक्ति के साथ **"ओ३म द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः, पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः, सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।"**

हे सर्वरक्षक प्रभु! द्युलोक शान्तिमय है, अन्तरिक्ष शान्तिमय है, पृथिवी शान्तिमय है, जल व प्राण शान्तिदायक है, सभी औषधियाँ सुखदायी हैं, सब विद्वान् लोग उपद्रवनिवारक हैं, आपकी वेदवाणी सुखदायी है, सभी वस्तुएँ शान्तिकारक हैं, स्वयं शान्ति भी शान्तिमय है। प्रभु! वही शान्ति मुझ उपासक को भी प्राप्त हो।

इसी प्रकार विचार व संकल्पशक्ति के साथ प्रतिदिन समस्त जीव मात्र के कल्याण की प्रार्थना करनी चाहिए। इससे हम सबका भला होगा। वास्तव में हमारी दुनिया वह नहीं है जिसको हम मानते हैं, बल्कि वह है जिसका हम विचार करते हैं, संकल्प करते

शेष पृष्ठ 7 पर ☞

वेद में भ्रूण हत्या निषेध

● ओम प्रकाश आर्य

भ्रूणहत्या महापाप है। वर्तमान में विशेष रूप से कन्या भ्रूण हत्या की चर्चा सुर्खियों में है। एक ओर जहाँ लड़कियों का घटता अनुपात चिन्ता का विषय है वहीं इनके विवाह–सम्बन्ध को लेकर अनेक कठिनाइयाँ हैं। अर्थ प्रधान युग में हर व्यक्ति अर्थ के पीछे अहर्निश दौड़ लगा रहा है। इसी के चलते अभिभावक चाहता है कि घर में स्त्री–पुरुष सब नौकरी करें। जहाँ पति–पत्नी दोनों नौकरी करते हैं वहाँ पैसे की तंगी तो नहीं रहती, किन्तु घर में बच्चों की समुचित देखरेख की समस्या अवश्य आती है। ऊपर से लड़का–लड़की के विवाह में लोग मनमाने ढंग से पानी की तरह पैसे बरबाद करते हैं। देखा–देखी अन्य लोग भी वैसा करने का प्रयत्न करते हैं। यही कारण है कि समाज में दहेज जैसी समस्या सुरसा बनी हुई है। इन सब कारणों से लोग कन्या भ्रूण हत्या को अंजाम देते हैं। इसके पीछे एक और कारण है उपभोक्तावादी संस्कृति और जॉब की समस्या। जो सरकारी सर्विस में है उसके लिए तमाम लड़की वाले मिल जाते हैं। जिसके पास जॉब नहीं है उसे कोई पूछता ही नहीं। फिर लड़के वाले लड़की की सुन्दरता, शिक्षा, कमाई आदि को प्राथमिकता देते हैं। जो इस पर खरी उतरती है वह भाग्यशालिनी लड़की है अन्यथा उसकी आयु विवाह के इन्तजार में पार कर जाती है। लड़की के माता–पिता प्यारी लड़की के विवाह के लिए परेशान हो जाते हैं। इन सबको देखते हुए लोग कन्या को पसन्द नहीं करते जबकि वेद में भ्रूण हत्या का सख्त निषेध किया गया है वेद भगवान का आदेश देखें–

मा नो महान्तमुत मा नो अर्भकं मा न उक्षन्तमुत मा न उक्षितम्।
मा नो वधीः पितरं मोत मातरं मा नः प्रियास्तन्वो रूद रीरिषः।। ऋ.1/114/7

अर्थात् "(रूद्र) न्यायाधीश दुष्टों को रूलाने हारे सभापति (नः) हम लोगों में से (महान्तम्) बुड्ढे या पढ़े–लिखे मनुष्य को (मा) मत (वधीः) मारो (उत) और (नः) हमारे (अथर्भकम्) बालक को (मा) मत मारो (नः) हमारे (उक्षन्तम्) स्त्री संग करने में समर्थ युवावस्था से परिपूर्ण मनुष्य को (मा) मत मारो (उत) और (नः) हमारे (उक्षितम्) वीर्य सेचन से स्थित हुए गर्भ को (मा) मत मारो (उत) और (मातरम्) मान– सम्मान और उत्पन्न करने वाले माता या विदुषी स्त्री को (मा) मत मारो (नः) हम लोगों के (पितरम्) पालने और उत्पन्न करने हारे पिता वा उपदेश करने वाले को (या) मत मारो (नः) हम लोगों की (प्रियाः) स्त्री आदि के प्यारे (तन्वः) शरीरों को (मा) मत मारो और अन्यायकारी दुष्टों को (रीरिषः) मारो।"

वेद कहता है कि बूढ़े व विद्वान् मनुष्यों को मत मारो। मत मारो बालक को। मत मारो युवा पुरुष को। मत मारो माता को। मत मारो पिता को। मत मारो गर्भ में बन रहे शिशु को। मत मारो विदुषी स्त्री को। मत मारो किसी पुरुष को। अन्यायकारी दुष्टों को मारो। अन्यायकारी दुष्टों से सबको कष्ट होता है। वे देश–समाज के शत्रु हैं। मंत्र में कहा गया है कि गर्भ को उच्छिन्न मत करो। भ्रूण को बढ़ने दो। उसे मत मारो। ऐसा करना पाप है। बूढ़ों को सम्मान दो। बालकों की रक्षा करो। युवाओं को फूलने–फलने दो। माता पिता को कष्ट मत पहुँचाओ। स्त्रियों की रक्षा करो। विदुषी स्त्रियों को सम्मान दो। माता–पिता को सुख पहुँचाओ। तत्त्वतः सबको जीने, बढ़ने, पलने, सुख, प्राप्त करने का अधिकार है। किसी का महत्त्व कम नहीं है। समाज में सबको जीने का पूरा हक है।

सम्प्रति विडम्बना यह है कि लोग घर में अच्छी वधू तो चाहते हैं किन्तु कन्या नहीं। कन्या कोई दूसरा दे, वह भी संस्कारित करके और सर्वगुणसम्पन्न बनाकर। अपने घर में कन्या का उदय न हो। यह कितनी विरोधाभास की स्थिति है। आज अस्पतालों में स्थान–स्थान पर लिखा रहता है– "लिंग परीक्षण कानूनन अपराध है। यहाँ लिंग परीक्षण नहीं किया जाता। कन्या–भ्रूण का पता करना महापाप है आदि आदि"। वेद का सख्त आदेश है कि गर्भ को नष्ट मत करो। चाहे गर्भ में लड़का हो या लड़की। वेद के आदेश की अवमानना करने से आज कई राज्यों में लड़के–लड़कियों के अनुपात में अन्तर आ गया है। लड़कियों की संख्या घट रही है। इसलिए कन्या बचाओ आन्दोलन जोरों पर है। जब लड़कियाँ नहीं रहेंगी तो बहुएँ कहाँ से आएँगी? वेद में स्पष्ट निर्देश है– "मा न उक्षितम्" अर्थात् हमारे वीर्य सेचन से स्थित हुए गर्भ को मत मारो। यह उस समय की स्थिति का वर्णन है जब पेट में गर्भ स्थिर हो गया है। भ्रूण बन रहा हो। वेद में कहा है–

"यामिरुग्णीरशिक्षतम्०"– ऋ.।112/19 अर्थात् "ब्रह्मचारिणी कन्याओं को अच्छे प्रकार शिक्षित करो।" "तद्देवेषु चकृषे भद्रमप्नः– ऋ.1/113/9 अर्थात् "तू विद्वान पतियों में वस कर कल्याण करने हारे सन्तानों को उत्पन्न किया कर।" "ऋतपाः, ऋतेजाः, सुम्नावरी, सुनृता, श्रेष्ठतमा, उषा"– ऋ.1/113/2 अर्थात् "सत्य की रक्षक, सत्य व्यवहार में प्रसिद्ध, प्रशंसित सुख वेदादि की सिद्धान्त वाणियों की प्रेरक, अतिशय उत्तम, उषा के समान विदुषी स्त्री दुःखों को दूर करे।" विश्ववारा (समस्त कल्याण को स्वीकार करने वाली कुमारी), अदिति (संतान की रक्षा के लिए), वृहती (अत्यन्त सुख को बढ़ाने वाली) ऋ.1/113/19 में स्त्री की महिमा द्रष्टव्य है। इस प्रकार के कितने महिमा मंडित मंत्र वेद में मिलेंगे जो नारी जगत् के लिए प्रशस्य हैं।

इन शब्दों के ऊपर विचार कीजिए। कहने को तो नारी की प्रशंसा की जाती है किन्तु व्यवहार में कुछ अलग ही देखने को मिलता है। आज नारी कितनी सुरक्षित है– यह आए दिन समाचार पत्रों के माध्यम से पता चलता है। एक से एक दिल को दहलाने वाली घटनाएँ घटित हो रही हैं। एकमात्र वेदमार्ग ही मानव को सुख शांति प्रदान कर सकता है। आइए हम अधिकाधिक वेदज्ञान को प्रसारित करें।

आर्य समाज, रावतभाटा
वाया कोटा (राजस्थान) 323305

☞ *पृष्ठ 6 का शेष*

संकल्प शक्ति का....

हैं। मानव विचारों का पुतला है जैसे इसके विचार होते हैं वैसा ही वह बन जाता है। अतः मनुष्य को निराशावादी न होकर सदैव सद्विचारों के साथ आशाजनक, प्रसन्नता, स्वास्थ्य और सफलता के विचारों को शुभ संकल्प के साथ मन के धारण करना चाहिए। सुख और आशा की तरंगें ही रक्त की गति पर उत्तम प्रभाव डालेंगी और शुद्ध तथा लाल करके स्वास्थ्य के सुप्रभाव को पूरे शरीर में बाँट देंगी।

धार्मिक और लौकिक दोनों विषयों में मनुष्य उतना ही सफल होता है जितना उसका संकल्प दृढ़ होता है। यदि कोई किसी कार्य में असफल है, इसका कारण उसका दुर्भाग्य नहीं बल्कि उसके संकल्प की निर्बलता है। मनुष्य के अन्दर यह बहुमूल्य गुप्त शक्ति ऐसी है कि जो कोई इससे काम लेना शुरू कर देता है उसको वह महान् बना देती है। मानव के संकल्प में अद्भुत शक्ति है, यदि आप जीवन में सफल होना चाहते हैं तो इस शक्ति को अपने अन्दर उत्पन्न और विकसित करें। इसलिए जो मनुष्य जैसा बनना चाहता है, उसको दृढ़ संकल्प के साथ अपने अन्दर वैसे ही विचार उत्पन्न करने चाहिए। जब मनुष्य अपने शुभ संकल्प व दृढ़ विचार के साथ खड़ा हो जाता है तब कोई वस्तु उसको अपने उद्देश्य से नहीं रोक सकती। ऐसे पुरुषार्थी मनुष्यों की सहायता के लिए प्रकृति अपना कार्य करती है। एक साधारण पुरुष भी अपनी आत्मिक संकल्प शक्तियों से काम लेकर बाद में महान् बन जाता है। संसार में ऐसे बहुत से महापुरुष हुए हैं जो साधारण व्यक्ति से महान् बन गए। महर्षि दयानन्द सरस्वती को साधारण साधु से वर्तमान काल के ऋषि बनाने वाली उनकी संकल्पशक्ति ही थी। समस्त भारतवर्ष उनके विचारों से विरोध रखता था, परन्तु जब वह मनस्वी एक बार अपने क्षेत्र पर आरूढ़ हो गया तो कोई भी मनुष्य उनके सम्मुख खड़ा न हो सका। इसका कारण उनकी अगाध विद्या ही नहीं थी, बल्कि दृढ़ संकल्पशक्ति और उस शक्ति में पूर्ण विश्वास होना था। इसी संकल्पशक्ति के सहारे श्री लाल बहादुर शास्त्री व अब्राहिम लिंकन जैसे साधारण मनुष्य भी महान् व्यक्ति बन गये।

दृढ़ और बलवान् संकल्पशक्ति के कारण मनुष्य में ऐसी योग्यता आ जाती है कि वह अपने विचारों को बहुत बड़ी शक्ति दे सकता है। अपने लक्ष्य पर फिर वह अपने विचार को उस समय तक स्थिर रखता है, जबतक उसका अभीष्ट प्राप्त नहीं हो जाता। जो अपना दृढ़ विचार बनाकर फिर दूसरों की दृढ़ सम्मति के कारण उसे बदल देता है तो उससे भी उसकी हीन संकल्पशक्ति का पता लगता है कि वह दूसरों की सम्मति का दास है। उसे कदम–कदम पर असफलता देखनी पड़ती है। इसीलिए संकल्पशक्ति का महत्त्व समझना चाहिए, किन्तु हठ, दुराग्रह और उच्छृखलता को ही संकल्प या विचार शक्ति नहीं समझ लेना चाहिए। संकल्प शक्ति और हठादि में महान् अन्तर है। पहली आचार की दृढता और श्रेष्ठता का प्रतीक है और दूसरा उसकी निर्बलता का परिणाम है।

संकल्प शक्ति को पूरा विकास देने के लिए दृढ़ आत्मविश्वास की आवश्यकता है और आत्मविश्वास की दृढ़ता आस्तिकता अर्थात् ईश्वर भक्ति से होती है। जब मनुष्य सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ ईश्वर पर पूर्ण विश्वास और उसका सहारा लेकर सभी कार्यों को उसके समर्पण करते हुए अनासक्त और निष्काम भाव से उसके लिए ही अपने को केवल उसका एक साधन समझकर कर्त्तव्य रूप से करता है तो उसकी स्वयं अपनी शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शक्तियाँ भी अगाध और असीम हो जाती हैं। यही कारण है कि ईश्वर भक्तों द्वारा जो महान् कार्य और अद्भुत चमत्कार अनायास साधारणतया प्रकट हो जाते हैं, उनके अनुकरण करने में संसार की सारी भौतिक शक्तियाँ अपना बल लगाकर भी असमर्थ रहती हैं।

अतः सत्पुरुषों के सारे संकल्प, इच्छाएँ ईश्वर के प्रति समर्पण और उसी की प्रेरणा से होती है, इसीलिए वे जो संकल्प करते हैं, वे पूर्ण होते हैं। इत्योम् शम्।

वैदिक भक्ति साधन आश्रम
आर्यनगर, रोहतक (हरियाणा)

www.thearyasamaj.org

कुँवर सुखलाल आर्य मुसाफिर

उत्तरार्ध

● डॉ. सहदेव वर्मा

सन् 1927 में जब कुँवर गुरदासपुर प्रचारार्थ गए तो उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। गुप्तचर विभाग ने पहले से ही उन्हें शांति भंग का दोषी करार दे दिया। उन पर तरह तरह के दोषारोपण करके अनेक धाराएँ थोप दी गईं। आर्य समाज की ओर से प्रसिद्ध एडवोकेट मेहता अमीचंद जी ने बिना फीस लिये ही केस लड़ा, और सरकार के सारे तर्क तिनके की तरह उड़ा दिए। कुँवर साहब ससम्मान बरी हुए। इस प्रकार इनकी प्रसिद्धि में चार चाँद लग गए। यही नहीं कुँवर साहब के बारे में यह मशहूर हो गया था –

'जहाँ पहुँचे घटा उठ्ठी, जहाँ पहुँचे बहार आई।
जहाँ पहुँचे उठा तूफाँ, जहाँ पहुँचे लहर आई।'

कुँवर सुखलाल आर्य मुसाफिर का नाम वाणी पर आते ही वह जमाना याद आता है, जब आर्य समाज और काँग्रेस अलग–अलग संस्थाएँ होते हुए भी भारतीय स्वाधीनता संग्राम में कन्धे से कन्धा मिला कर संघर्षरत थीं। उस समय देश में दो ही 'लाल' ऐसे थे जिन्हें सुनने के लिये लाखों लोग खाना पीना तक छोड़कर दौड़े चले आते थे। इनमें एक थे पं. जवाहरलाल और दूसरे कुँवर सुखलाल। वैसे दोनों में धरती आसमान का अन्तर था। पं. जवाहरलाल नेहरू का जन्म सम्पन्न घराने में हुआ और शिक्षा भी विदेश में उच्च कोटि की हुई। दूसरी ओर कुँवर सुखलाल जी का जन्म तो साधारण परिवार में हुआ ही, इनका पालन पोषण और शिक्षा भी ग्रामीण परिवेश में कुछ गुरुकुलीय ढंग से हुई। परन्तु इनका सुरीला कण्ठ, तीव्र स्मृति तथा अद्भुत वक्तृत्व कला इन्हें ईश्वरीय देन थी। इनकी प्रभावशाली वक्तृता को सुनकर कोई भी व्यक्ति मैस्मेराइज्ड हो सकता था। आर्य समाज के शीर्ष नेता स्व. पं. शिवकुमार शास्त्री ने एक स्थान पर लिखा है कि कुँवर सुखलाल 'आर्य मुसाफिर' ने प्रचार क्षेत्र में पग रखते ही जेल को अपना आशियाना बना लिया था। उन्होंने अनेक आन्दोलनों में बढ़ चढ़ कर भाग लिया और उन्नीस जेलों में गए। लगभग 12 वर्ष की अवधि का समय उन्होंने जलों में ही व्यतीत किया।

कुँवर सुखलाल जी म. गाँधी के परमभक्त थे। जब वे (कुँवर साहब) सीतापुर जेल से छूट कर आए तो उन्होंने गाँधी की प्रशंसा इन शब्दों में की थी–

'भारत में आकर गाँधी ने कैसा चक्र चलायो है।
इनके चर्खे की चूँ चूँ से सारा जग थर्रायो है।।
इस नंगे फकीर ने देखो कैसो जाल रचायो है।
अंग्रेजों के छक्के छूट गये लन्दन में शोक समायो है।।'

लेकिन जब हैदराबाद में निजाम शाही के अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध आर्य समाज ने सत्याग्रह का संचालन किया तो गाँधी जी मौन रहे। तब बड़े मलाल के साथ गाँधी जी को सम्बोधित करके कुँवर साहब ने लिखा–

'ये क्या हैदराबाद में हो रहा है?
महशर का आलम बरपा हो रहा है।
जुल्म और फिर बे ख़ता हो रहा है।
खतावार होते तो चाहे जो होता,
हमारी हिमायत न कर प्यारे बापू,
मगर यह तो कह दो गज़ब हो रहा है।।'

ऐसी ओजस्वी और पैनी लेखनी थी कुँवर सुखलाल जी की, जो मं. गाँधी को भी झकझोर सकती थी।

कुँवर साहब ने तो उन आर्य समाजियों को भी फटकार लगाई है जो स्वार्थवश अपने तक ही समाज की गतिविधियों को सीमित रख कर गद्दियों पर जम गये थे–

'जिन्हें संसार में संसार का उपकार करना था,
जिन्हें दुनिया में वैदिक धर्म का विस्तार करना था।
अनाथों और अछूतों का जिन्हें उद्धार करना था,
जिन्हें निज देश और जाति का बेड़ा पार करना था।
उन्हें देखो जो बाहम बरसरे पैकार बैठे हैं।
समाजों को मिटाने के लिए तैयार बैठे हैं।।'

जैसा पहले कहा गया है कि कुँवर सुखलाल जी गाँधी जी के परम भक्त थे, लेकिन अंधभक्त नहीं। इसलिए वे पाखण्ड खण्डन तथा इस्लाम का विरोध करने से भी नहीं चूकते थे। इस दृष्टि से उनके आदर्श केवल ऋषि दयानन्द ही थे। इसीलिये बुद्धि के विपरीत मत के खण्डन से नहीं चूकते थे। इस्लाम के विषय में उनके बेबाक विचार देखिए–

'है मजहब इस्लाम गन्दा इससे उलफ़त छोड़ दो।
सत्य वैदिक धर्म जो है उससे प्रीति जोड़ दो।
सुन के हथकण्डे कुराँ के धर्म से गाफ़िल न हो।
बीबी और लौंडों से मियाँ दिल लगाना छोड़ दो।।'

कुरान की ही नहीं आर्य मुसाफिर ने तो बाइबिल की भी कस कर खबर ली है–

'बाइबिल क्या है? यह एक फसाना झूठा।
खुदा का बेटा भी ईसु को बताना झूठा।।
इसमें रुहानियत का नामो निशां मिलता नहीं।
पादरी जी लिये फिरते हैं फसाना झूठा।।'

कुँवर साहब ने जब कुरानियों और किरानियों को नहीं छोड़ा, फिर भला पाखण्डी पण्डों को कैसे बख्श देते?

'ये क्या कर रहे हो किधर जा रहे हो?

अँधेरे में क्यों ठोकरें खा रहे हो?
कहो क्या यही काम हैं ब्राह्मणों के?
कि दुनिया को बातों से बहका रहे हो।
बनाया है खुद अपने हाथों से जिसको,
गज़ब है खुदा उसको बतला रहे हो।
हो जिन्दा मगर नाम मुर्दों का लेकर,
पड़े मुफ्त में माले तर खा रहे हो।'

कुँवर सुखलाल जी की बातों का प्रभाव तत्काल अपना रंग दिखाता था। पश्चिमी उत्तर प्रदेश में बड़ौत नाम का एक कस्बा है। काफी समय पहले (आजादी से भी पूर्व) वहाँ ईसाइयों ने अपने मत के प्रचार हेतु एक संस्थान बनाने के लिये एक लाख ईंटें मंगवाईं। इस बात से वहाँ के आर्य जन बड़े चिन्तित हुए। उनकी समझ में नहीं आया कि प्रचार के इस साधन को कैसे रोका जाये? इसी बीच एक दिन पता चला कि कुँवर सुखलाल 'आर्य मुसाफिर' किसी कार्यक्रम में भाग लेने के लिये 'शामली' आ रहे हैं। शामली के लिए ट्रेन बड़ौत होकर ही जाती है। फिर क्या था। भारी संख्या में आर्य समाजी रेलवे लाइन पर जाकर खड़े हो गए। ट्रेन रूक गई तो गाड़ी में कुँवर साहब को खोजकर गाड़ी से उतार कर उन्हें अपनी समस्या बताई। वे रात्री के प्रोग्राम के लिये तैयार हो गये। बड़ौत के आसपास का जाट बहुल क्षेत्र आर्य समाजियों का गढ़ है। कुछ लोग तभी साइकिलों पर सवार होकर आस पास के गाँवों में कार्यक्रम की सूचना दे आए। कुँवर सुखलाल का नाम सुनकर रात्री के आठ बजे से पहले ही गाँवों के लोग भारी संख्या में बड़ौत में जमा हो गये। तभी मंच पर कुँवर साहब ने खड़े होकर अपना व्याख्यान शुरू कर दिया। उन्होंने कहा– 'मेरी समझ में नहीं आता कि क्या आर्य भी लाचार और निराश हो सकते हैं? एक दयानन्द था जिसके पास सत्य और ईश्वर के सिवा कुछ भी नहीं था। उसने सारे जगत् को झकझोर दिया– वह विधर्मियों के सामने न झुका न रुका और अब तो आप लोग लाखों की संख्या में हैं, आपके पास साधन भी हैं, फिर भी निराश–बेबस! आर्यो याद करो ऋषि के पुरुषार्थ को, निर्भयता और संगठन को। दस बीस ईसाई अपना संस्थान बनाने का इरादा लिए बैठे हैं। याद रखो– **बात बातों से हर्गिज़ बनेगी नहीं– मर मिटो बात पर बात की बात है।**

इसके बाद एक प्रेरणास्पद् भजन प्रस्तुत किया–

'जिसे दुनिया कहते हैं अय दुनिया वालों,
ये रण क्षेत्र है कोई महफ़िल नहीं है।
जिसे मरना आता नहीं राहे हक में,
वो नामर्द हैं मर्दे कालिब नहीं है।
अरे गाफ़िलो एक हो जाओ मिलकर
अगर मार गैरों की खानी नहीं है।'

मेरे प्यारे आर्यों, क्या आप लोगों ने कभी गौर फरमाया है कि क्यों छोटी–छोटी समस्याएँ आपकी राह रोक कर खड़ी हो जाती हैं– सुनो, मैं बताता हूँ–

'धर्म के नाम पर प्यारो तुम्हें मरना नहीं आता।
हकीकत की तरह कुर्बान करना सर नहीं आता।
तबाही का तुम्हारी एक ही कारण है बस मित्रो!
तुम्हें कहना तो आता है मगर करना नहीं आता।।'

बस फिर क्या था– आर्य मुसाफिर की इस जोश भरी ललकार को सुनकर जनता में ऐसा उत्साह उमड़ा कि सभा समाप्त होते ही सारा जन–समूह एक–एक करके वे सारी ईंटें उठाकर ले गया, और अगले ही दिन से बड़ौत से जाट वैदिक कॉलिज (अब जनता वैदिक कालिज) की स्थापना हो गई। यह कॉलिज आज पश्चिमी उत्तर प्रदेश का एक प्रसिद्ध शिक्षा संस्थान है।

कुँवर सुखलाल जी यद्यपि राजपूत वंश में पैदा हुए थे। किन्तु उनकी कमजोरी पर भी वार करने से नहीं चूकते थे। जिला अलीगढ़ के एक गाँव में बृहद् राजपूत सम्मेलन का आयोजन किया गया। (यह सन् 1945 से पहले की घटना है।) जिसमें कई हजार राजपूत उपस्थित हुए। सम्मेलन का सभापतित्त्व अवागढ़ नरेश राव कृष्ण पाल सिंह कर रहे थे, जो पूरी सजधज के साथ मंच पर आसीन थे। मंच पर आकर सभी वक्ता मुख्य विषय को तो कम छू रहे थे, पर सभापति महोदय की प्रशंसा के गीत ज्यादा गा रहे थे। कोई उन्हें शेर कह रहा था, तो कोई सिंह– केसरी, वीर राजपूत के रूप में प्रस्तुत कर रहे थे। जब कुँवर साहब की बारी आई तो उन्होंने अपने ही ढंग से बोलना शुरू किया। उन्होंने कहा– कि ये शेर तो जरूर हैं बल्कि बब्बर शेर हैं लेकिन अय राजपूतो! आप सभी एक बात ध्यान से सुनें– और राजा भी सुने, कि ये शेर तो हैं पर सर्कस के शेर हैं, पिंजरे के शेर हैं जो कटघरे में बन्द होकर रिंग मास्टर के चाबुक के फटकार पर नाचते हैं, उसी के इशारे पर उठते बैठते और लेटते हैं। चाबुक के इशारे पर ही अन्दर और बाहर आते–जाते हैं। अपने का राजपूत कहने वालों सुनो– आप बराबर अपने आपको राजपूत कहे जा रहे हैं, पर कभी गहराई से सोचा, अरे राज तो गया इंग्लैण्ड– यहाँ तो सब पूत ही पूत बैठे हैं। अगर सच्चे राजपूत होते तो क्या देश में गौ वध होता– क्या गरीब सताए जाते? क्या देश गुलाम होता? क्या स्त्रियों का अनादर होता?

इतना सुनना था कि सभी में सन्नाटा छा गया, ऐसी चुप्पी छा गई कि सुई गिरने की आवाज भी सुनी जा सके। ऐसे निर्भीक और स्पष्ट वक्ता थे कुँवर सुखलाल 'आर्य मुसाफिर'।

पीछे हैदराबाद के सत्याग्रह का उल्लेख हुआ है। वहाँ पर हिन्दुओं की

शेष पृष्ठ 9 पर ☞

ओ३म धियो यो नः प्रचोदयात्, प्रभु की वैदिक प्रेरणा से सन्मार्ग पाएँ।। क्या ईवर ही पार लगाएगा

● आचार्य आर्य नरेश वैदिक गवेषक

स जब से अनार्य अवैदिक युग की प्राप्ति हुई है तब से अज्ञान युक्त गुरुओं के वाक्यों को मन्त्र समझा जाने लगा व पाखण्डी, झूठे चमत्कारों और व्रतों ने धार्मिक कहलाने वाले लोगों की बुद्धि पर असत्य का पर्दा डाल दिया। ईश्वरीय गायत्री आदि मंन्त्रों का पाठ करने वाले लोग भी आज यही समझते हैं कि 'धियो यो नः प्रचोदयात्' का पाठ करने मात्र से भगवान स्वयंमेव हमारे सारे कष्टों को, उलझनों व समस्याओं को दूर कर देगा। हमें मन्त्र पाठ को छोड़ कर कुछ करने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि भगवान सर्वशक्तिमान है। यह मत भूलो कि ईश्वर उसी का कल्याण करता है जो स्वयं भी पुरुषार्थ करता है।

यह ध्रुव सत्य है कि जो निराकार, सर्वव्यापक, सृष्टिकर्ता, वेदज्ञान दाता, चेतन शक्ति रूप प्रभु को छोड़ कर किसी चौथे सातवें, परमधाम वाले एवं ब्रह्मधामी अविद्यमान की प्रार्थना करते हैं। वे तो वहाँ न होने से सुनते ही नहीं, क्योंकि आसमान में चौथै, सातवें एवं ब्रह्मधाम आदि स्थान की विद्यमानता को विज्ञान भी नकारता है। जो सच्चे 'ओ३म' ईश्वर को छोड़कर उसके दिवंगत भक्तों ब्रह्मा, शिव, राम, कृष्ण, व कार्तिकेय आदि की प्रार्थना में गत 2-3 हजार वर्षों से संलग्न हैं उन की भी प्रार्थना व्यर्थ है क्योंकि वे सुनने वाले संसार से कभी के जा चुके हैं। यदि ये सब होते तो न तो इनको हिन्दू भक्तों के सोमनाथ, अयोध्या, मथुरा व काशीनाथ आदि मुसलमानों द्वारा तोड़े जाते एवं नहीं अल्लाह और गॉड को मानने वालों का अब तक अमेरिका इजरायल, लीबिया, सीरिया, बंगलादेश, अफगानिस्तान, पाकिस्तान और इराक आदि में लाखों ईसाइयों एवं मुसलमानों का रक्त ही बहता। काश वे सच्चे 'ओ३म्' के भक्त होते।

इन दोनों को छोड़ तीसरे प्रार्थना करने वाले लोगों का ईश्वर तो सच्चा व चेतन है परन्तु वे 'धियो यो नः प्रचोदयात्' का जप करते ऐसा सोचते हैं कि इन को तो बस प्रार्थना ही रटनी मात्र है, शेष सब कल्याण करने का कार्य ईश्वर ही करेगा। हम चाहे गोरों की चाय पीएँ व काफी, गोरों की अंग्रेजी से प्यार करें अथवा पीजा से, ए.ओ. ह्यूम गोरे की बनाई कांग्रेस को वोट दें अथवा किसी गो-राम प्रेमी पार्टी को वोट दिए बिना घर बैठें, ईश स्वयं काल्याणकारी है। वही हमारी गाय और राम की वैदिक संस्कृति को बचाएगा! हम गोरी सरकार की आर्य बाहर से आए, वे गोमांस खाते थे, वेदों में जादू टोना वाले पाठयक्रम, जार्ज पंचम के स्तुति गीत 'जनगणमम' को दिल से गाते, न्यायालयों में अंग्रेजी की गुलामी सहते, धोती, चोटी, पगड़ी व जनेऊ की उपेक्षा कर जीन्स और अर्धनग्न लिबास में रहते मात्र 'प्रचोदयात्' कहने से कांग्रेस द्वारा उत्पन्न किए मुस्लिम वोट बैंक, धमाकों से स्वयं व अपने कश्मीर, असम, गोधरा, मुम्बई डोमीनियम शिप को गुलामी व वीर सैनिकों के मान को बचा लेंगे? पाक सेना हमारे सैनिकों का सिर काट ले जाती है हमारे क्रिकेट व पाक प्रेमी नेता उस के प्रधानमंत्री को दावत पर बुलाते हैं।

क्या शिव जी, श्री कृष्ण, श्री राम, पं. चाणक्य, राणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी, भगत सिंह, सुभाष चन्द्र बोस, बिस्मिल आदि को मंत्र मांगे जाप से ही विजय मिली थी अथवा सेना द्वारा युद्ध करने से लाखों वीरों का खून बहने पर भी अपनी मूर्खता से जो आज विदेशी गोरों का राज चल रहा है उसमें एवं उन विदेशी गोरों के राज में क्या अन्तर है? वही गोहत्या, शराब, मांस नग्नता, व्यभिचार, जिहादी बम हमलों से हजारों हिन्दुओं का कत्ल! क्या देव दयानन्द, बिस्मिल, भगत सिंह सुभाष, आजाद इसीलिए बलिदान हुए थे?

आर्यपुत्रो! प्रचोदयात् की प्रार्थना तो करो परन्तु सफलता हेतु स्वयं अंग्रेजों व मुगलों का चाल-चलन व खान-पान छोड़ बच्चे-बच्चे तक संदेश पहुचाओ कि इस बार गो-राम हत्यारी सरकार न आने पाये

विशेष:- अधिक जानकारी हेतु "achrya arya naresh" टाईप कर फेसबुक पर जुड़े

हिमाचल उद्‌गीथ स्थली

☞ पृष्ठ 8 का शेष

कुँवर सुखलाल आर्य...

धार्मिक भावनाओं को जिस प्रकार आहत करके उन पर अत्याचार किये जा रहे थे, यह एक अलग इतिहास है। आर्य समाज के शीर्ष नेताओं ने कई वर्षों तक निजाम हैदराबाद को हर तरह से समझाने की कोशिश की, पर उसके कानों पर जूँ तक नहीं रेंगी, अन्ततोगत्त्वा समाज का बिगुल बजाकर निजाम को उसकी औकात बताई। यद्यपि आठ नौ महीने तक इस शांतिपूर्ण आंदोलन में आर्य समाज को लगभग तीस व्यक्तियों का बलिदान देना पड़ा- पर आर्यों ने अपना लक्ष्य प्राप्त कर ही लिया। बाद में तो म. गांधी ने भी इस शांतिपूर्ण सत्याग्रह की सराहना की थी।

कुँवर सुखलाल जी भी सत्याग्रह में गए और अपनी माँग मनवा कर ही लौटे। हैदराबाद की जेलों में भी आपने कई गजलें लिखीं जिनसे उस स्थिति का कुछ आभास होता है। कुछ पंक्तियाँ देखिये-

'यह कैसा फ़साना है यह कैसी कहानी है।
सुनकर जिसे महफ़िल की हर आँख में पानी है।।
क्या खाक लिखे, जबकि महबस में मुसाफ़िर को।
दो ज्वार की रोटी हैं और दाल में पानी है।।'

लाहौर में उस समय दो प्रसिद्ध आर्य समाजें थी। अनारकली और बच्छोवाली। दोनों के उत्सव प्रायः एक ही तिथियों में होते थे। आर्य समाज के भी दो कद्दावर नेता थे जिनकी वाणी में जादू था। एक थे कुँवर सुखलाल जी और दूसरे शास्त्रार्थ महारथी पं. रामचन्द्र जी देहलवी। अनेक प्रत्यक्षदर्शियों का कथन है कि जिस समय, जिस समाज में इन महोपदेशकों का कार्यक्रम होता था उसी तरफ लोग झुण्ड के झुण्ड इन्हें सुनने को भागते चले जाते थे। कई बार तो देखने में आता था कि इनको सुनने के लिये लाहौर के बाजार सुनसान हो जाते थे। उत्सवों में हजारों की भीड़ एकत्र हो जाती थी। यद्यपि उन दिनों लाउड स्पीकरों का चलन नहीं था- परन्तु ये महानुभाव विशेष रूप से कुँवर सुखलाल तो समस्त श्रोताओं पर सम्मोहन कर देते थे, इसलिए इनको सबसे बाद में बोलने का समय दिया था। आखिर में काफी रात गुजरने के बाद कुँवर साहब स्वयं ऐलान करते थे कि वैसे तो जब तक चाहूँ आप लोगों को रोक सकता हूँ परन्तु मेरा नाम सुखलाल है, दुखलाल नहीं, इसलिए अब अपना कथन समाप्त करता हूँ। महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि इन्हें सुनने के लिये हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई सभी धर्मों और तबकों के व्यक्ति बिना भेदभाव आते थे, और इनके व्याख्यानों का आनन्द लेते थे।

इनके प्रचार का आधार कुछ इस प्रकार होता था-

"नकारा धर्म का बजता है आये जिसका जी चाहे।
यह सच्चा धर्म है दिल को लगाये जिसका जी चाहे।
सुनो उपदेश वैदिक धर्म का, कायम तहे दिल से।
गलत जो बहम रखते हैं मिटाए जिसका जी चाहे।"

विषय चाहे कुछ भी हो, ऋषि दयानन्द के महत्व को ये ओझल नहीं होने देते थे। यह गीत उस समय बहुत प्रिय और प्रसिद्ध था-

"देखो स्वामी दयानन्द क्या कर गया?
गुलशने हिन्द को फिर हरा कर गया।
कुल मुजाहिब में ऐसी मची खलबली।
गोया महशर का आलम बपा कर गया।।
तर्क के तीर बरसाए इस ज़ोर से।
होश पाखण्डियों के हवा कर गया।।
वो बुरे हैं जो कहते हैं उसका बुरा।
वो भला था हमारा भला कर गया।।"

कुँवर साहब जब अपना व्याख्यान समाप्त करते थे, तो अन्त में ज़ोर देकर कहते थे अब आप लोग अपने अपने निवास स्थानों पर जा रहे हो- पर मेरी एक बात सुनकर जाना और उसे जहन में रखना-

"भारत में जन्म लेकर भारत की शान रखना।
अशराफ़ के लहू का दुनिया में नाम रखना।।
ज़िल्लत की ज़िन्दगी से मरना है लाख बेहतर।
मर्दों का कौल यह है जाँ दे के आन रखना।।"

इस प्रकार देश, धर्म और जाति का उपकार करते हुए कुँवर सुखलाल आर्य मुसाफिर ने अंतिम साँस तक वैदिक धर्म और आर्य जाति के लिये ही सोचा। आप यह जानकर आश्चर्य करेंगे कि बड़ी बड़ी सभाओं और सम्मेलनों में जिसके नाम से चाँदी बरसती थी, उसने घर या मकान के नाम पर एक झोंपड़ा तक नहीं बनाया। अपने बच्चों के लिये एक ईंट तक नहीं लगाई। बैंक में कभी एक पैसा तक जमा नहीं किया। हालाँकि उन्हें शासन की ओर से कोठी कार तक देने की पेशकश भी की गई थी- और लोक-संपर्क विभाग में सर्वोच्च पद देने का भी तत्कालीन उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री गोबिन्द बल्लभ ने वायदा किया था। किन्तु उन्होंने इस माँग को यह कहकर ठुकरा दिया था कि हमने देश सेवा पुरस्कार के उद्देश्य से नहीं की- बल्कि कर्तव्य समझकर कर की है। सच तो यह है कि सेवा की कोई कीमत नहीं होती, त्याग की कोई सीमा नहीं होती और बलिदान का कोई बदला नहीं होता। ऐसी महान आत्मा के वियोग से भला किसे दुःख न होगा।

"चल बसी कोयल चमन से सारा गुलशन रो रहा।
रो रहे हैं गुल सभी और बागबाँ भी रो रहा।

आर्य मुसाफ़िर कुँवर सुखलाल जी को हमारी हार्दिक श्रद्धांजलि।

दूरभाष : 0180/2643700

www.thearyasamaj.org

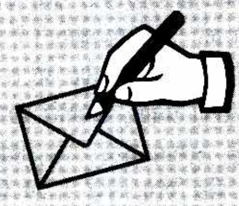

पत्र/कविता

महिलाओं पर अत्याचार क्यों?

देहली में महिलाओं पर अत्याचार की घटनायें दिन–प्रति–दिन बढ़ रही हैं। क्यों? क्या इस सब के लिये समाज का उत्तर दायित्व नहीं है? परिवार छिन्न–भिन्न हो रहे हैं। माँ–बाप की अवहेलना हो रही है। संस्कार लुप्त हो रहे हैं क्योंकि हम उन्मुक्त होने में विश्वास रखते हैं। समाचार पत्रों के अनुसार देहली में प्रत्येक बाजार में मदिरा और मांस की दुकानें तेज़ी से खुल रही हैं। क्या यह सभ्य समाज की परिचायक हैं। परिवारों में अब बिखराव आ रहा है। हमारी भारतीय सभ्यता, संस्कृति, भाषा, शिक्षा, खान–पान सब लुप्त हो रहा है। देर रात्रि तक बाजारों की रौनक कायम रहती है। अधिकांश टी० वी० सीरियल उन्मुक्त जीवन शैली को ज्यादा प्रोत्साहन देते हैं। खेद तो यह है कि टी० वी० के कार्यक्रम हम परिवार के साथ बैठकर कर नहीं देख सकते।

धार्मिक आस्थायें और अनुपालन केवल औपचारिकता है। आर्य समाज के नियम ओर अस्थायें अब परिवार से लुप्त होती जा रही हैं। युवा पीढ़ी आर्य समाज में विश्वास नहीं रखती? क्यों?

कृष्ण मोहन गोयल
113 बाज़ार कोट
अमरोहा

****

शहीदों की आत्मा

मैं शहीदों की आत्मा हूँ
वर्षों बाद प्रकट हुई हूँ भारत भूमि में
देखने यही कि कहीं मेरी कुर्बानी
व्यर्थ तो नहीं गई!
मैंने झेली है कारावास और हथकड़ियाँ
मैं भटकी हूँ भूखी–प्यासी जंगलों में,
मैं बिछड़ी हूँ माता–पिता, भाई–बहिनों से
मैंने चूमा है फाँसी के फन्दे को भी
केवल इसलिए कि भारत माता आजाद हो
उसकी सन्तानें खुली हवा में साँस लें,
और रामराज्य की हो स्थापना।
पर क्या मेरा सपना साकार हुआ?
हमें स्वतंत्रता तो मिली पर
पर वह लिपटी थी स्वछन्दता के आवरण में
हमें मिले तो नेता पर भ्रष्टाचार
और स्वार्थ परता के दल–दल में धँसे हुए,
हमने तो बोए थे प्रेम और सौहार्द के बीज
पर ये आतंकवाद के कांटे कैसे उग आए?
अतः जागो! मेरे साथियो जागो!!
शहीदों का बलिदान व्यर्थ न जाने पाए।
सरहदों पर निगाहें गड़ा कर रखो
शत्रु गिद्ध बन कर मंडरा रहे हैं।
फिर यह राष्ट्र पराधीन न होने पाये
राष्ट्र प्रेम का पहन कवच,
सीमाओं पर डट जाओ,
मातृभूमि के लिए समर्पित हो जाओ।

डॉ. सुरेन्द कुमार शर्मा
वानप्रस्थ आश्रम
ज्वालापुर (हरिद्वार)

एक धर्म, एक भाषा, एक लक्ष्य

आर्य जगत् के 65वें अंक में पाण्डया मोहन लाल के प्रश्न "भारत का पूर्ण हित एवं जातीय उन्नति कब होगी" के उत्तर में निवेदन है कि स्वामी दयानन्द ने कहा था कि एक धर्म, एक भाषा एवं एक लक्ष्य बनाए बिना ऐसा होना मुश्किल मुश्किल है। एकदम सत्य है।

भारत में ये तीनों संपद् आदि काल से मौजूद हैं।

एक धर्म– हिन्दू या आर्यधर्म जिसे सभी मानते हैं किसी ने नहीं छोड़ा है। **'माता भूमि पुत्रो अहं पृथिव्याः'।** किसी ने भूमि माता के अंगों को छोड़ा हो मुझे मालूम नहीं। भूमिमाता को ही हिन्दमाता कहते हैं। **'वंदे मातरम्'** में भूमि की वंदना है।

एक भाषा– हिन्दमाता के नाम पर उनकी भाषा को हिन्दी कहते हैं। हिन्द माता की संतानों को हिन्दू कहते हैं। चतुर्वर्ण के कर्मों को यथा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र को किसी ने नहीं छोड़ा है। ये क्रमशः सुशिक्षा, सुरक्षा, वाणिज्य एवं उत्पादन या निर्माण कर्म हैं। इन कर्मों को आर्यकर्म कहते हैं। इनसे संबंधित विभूतियां क्रमशः ज्ञान, शक्ति, संपदा एवं विद्या व संगीत है। इन्हें भी कोई नहीं छोड़ना चाहता।

एक लक्ष्य–

"सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः,
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखमाग्भवेत्।।"

तारक नाथ मुंडा
ग्राम कुछेला पो. सरगीमा,
जि. सुन्दरगढ़ (उडीसा) पिन 770037

****

शहरों का नामान्तरण करना चाहिये

प्रथमतः 'आर्यजगत्' के प्रबंधन विभाग का अतिशय आभार व्यक्त करता हूँ क्योंकि यह साप्ताहिक पत्रक ठीक प्रकार से प्राप्त हो रहा है। अन्य आर्य पत्रिका आदि कभी नियमित प्राप्त नहीं होते किंतु आर्य जगत् नियमित प्राप्त हो रहा है। हम लोग इसका कभी सामूहिक वाचन श्रवण करते हैं ज्येष्ठ नागरिक मंडल के साप्ताहिक सत्संग में। लेखक आदरणीय भवानीलाल जी भारतीय तथा डॉ. बिजेन्द्रपाल सिंह जी के लेख बहुत अच्छे प्रेरक रहे हैं। अतः उन्हें हार्दिक धन्यवाद।

किन्तु खेद है कि लेख में कई जगह मुम्बई को बम्बई लिखा गया जाता है। महर्षि स्वामी दयानन्द जी के गुण गौरव में भी लेख होते हैं। ध्यान रहे महर्षि जी ने अपने किसी ग्रंथ में किसी भी स्थान पर बम्बई नहीं कहा मुम्बई ही कहा है। लिखा है। उस समय अंग्रेज राज था और Bombay का अपभ्रंश प्रचलित था। स्वतंत्रता के बाद राज्य शासन ने मुम्बई नामान्तर घोषित किया है जिसका अनुसरण करना और इस दिशा में आर्य शहरों का भी नामान्तरण राष्ट्रीयता की दृष्टि रखकर करना चाहिए।

के.ने. परतवार
नागपुर

****

ऋग्वेद में स्वराज्य सूक्त

● शिवनारायण उपाध्याय

स्वराज्य मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है और मैं इसे लेकर रहूँगा," यह घोषणा लोक मान्य बाल गंगाधर तिलक ने बीसवीं सदी के प्रारम्भ में की थी। परन्तु स्वामी दयानन्द सरस्वती इसी प्रकार की बात यजुर्वेद के भाष्य में कर चुके थे। वास्तव में इस प्रकार की घोषणा ही नहीं, अपितु व्यवस्था तो ऋग्वेद मण्डल एक सूक्त अस्सी जिसे स्वराज सूक्त कहा जाता है कि द्वारा सृष्टि के प्रारंभिक काल में ही की जा चुकी थी। इस सूक्त में कुल सौलह ऋचाएँ हैं। इन ऋचाओं के अन्त में "अर्चन् अनु स्वराज्यम्" शब्द आता है। इस विषय पर हम स्वराज्य सूक्त की ऋच्चाओं के माध्यम से ही विचार कर रहे हैं।

इत्था हि सोम इन्मदे ब्रह्मचकार वर्धनम्।

शविष्ठ वज्रिन्नोजसा पृथिव्या निःशशा अहिमर्चन्ननु स्वराज्यम्।। ऋ.1.80.1

पदार्थ – हे (शविष्ठ) बलयुक्त (वज्रिन) शस्त्रास्त्र विद्या से सम्पन्न सभापति। जैसे सूर्य (अहिम्) मेघ को, जैसे (ब्रह्मा) चारों वेदों का ज्ञाता (ओजसा) अपने तेज से (पृथिव्याः) विस्तृत भूमि के मध्य (मदे) आनन्द और (सोमे) ऐश्वर्य की प्राप्ति कराने वाले में (स्वराज्यम्) अपने राज्य को (अन्वर्चन) अनुकूलता से सत्कार करता हुआ (इत्था) इस हेतु से (वर्धनम्) बढ़ती को (चकार) करे वैसे ही तू सब अन्यायाचरणों को (इत् हि) ही (निःशशाः) दूर कर दे।

भावार्थ– हे सभापति। जैसे सूर्य मेघ को नष्ट कर देता है। वेदका विद्वान जैसे इस विस्तृत भूमि में स्वराज्य की स्थापना कर देता है वैसे वह राज्य की, अन्याय आचरण करने वालों से रक्षा करे। साथ ही विद्या की उन्नति से आनन्द की वृद्धि करे। वास्तव में स्वराज्य की स्थापना एवं रक्षा में विद्या, बल, दुष्टों को दमन और उत्तम व्यवस्था में आनन्दों की वृद्धि की सबसे अधिक आवश्यकता है।

स त्वा मदद् वृषा मदः सोमः श्योनामृतः सुतः।

येना वृत्र निरद्भ्यो जघन्थ वज्रिन्नोजसार्चन्ननुस्वराज्यम्।। ऋ.1. 80.2.

भावार्थ – इस मंत्र में लुप्तोपमालंकार है। मनुष्यों को चाहिए कि जिन पदार्थों एवं कामों से प्रजा प्रसन्न हो वे कार्य सम्पन्न कर प्रजा को हर्षयुक्त करें और शत्रुओं को निवृत कर धर्म युक्त राज्य की नित्य प्रशंसा करें।

मेह्राभीहि घृष्णुहि न ते वज्रो नि र्यसते।

इन्द्र नृम्णंहिते शवो हनों वृत्रं जया अयोऽर्चन्ननु स्वराज्यम्। ऋ. 1.80.3.

हे (इन्द्रः) तेजस्वी शासक जैसे सूर्य का (वज्रः) किरण समूह (वृत्रम्) मेघ को (हनः) नष्ट करता और (अपः) जलों को (निर्यस्ते) नियम में रखता है। वैसे जो (ते) आपके शत्रु हैं उनका हनन करके (स्वराज्यम्) अपने राज्य का (अन्वर्चन) सत्कार करता हुआ (हि) निश्चय करके (नृम्णम्) धन को (प्रेहि) प्राप्त हो। (शवः) बल को (अभीहि) चारों और से बड़ा शरीर और आत्मा के बल से (घृष्णुहि) ढीठ हो तथा (जया) जीत को प्राप्त हो। इस प्रकार करते हुए (ते) आपका पराजय (न) होगा।

निरिन्द भूम्या अधि वृत्रं जघन्थ निर्दिवः।

सजा मरूत्व तीरवंजीवधन्या इमा अपोऽर्चन्ननु स्वराज्यम्।। ऋ. 1.80.4.

हमारे शासक को सूर्य के समान तेजस्वी होकर जैसे सूर्य मेघ को नष्ट कर जल की वर्षा करता है जिससे अनाज एवं नाना प्रकार की ओषधियाँ उत्पन्न होकर प्रजा को लाभ पहुँचाती हैं वैसे ही वह अपराधियों को कठोर दण्ड दे, धर्म का प्रचार करे और राज्य की रक्षा करता हुआ प्रजा को नाना प्रकार से निरन्तर सुख सम्पन्न करे।

इन्द्रो वृत्रस्य दोधतः सानुं वज्रेण हीडितः।

अभिक्रम्यावजिघ्नतेऽयः समापचोदयन्न र्चन्ननु स्वराज्यम्।। ऋ. 1.80.5.

भावार्थ – इस मंत्र में वाचक लुप्तोपमा अलंकार है। जो सूर्य के समान अविद्यान्धकार को छुड़ा विद्या का प्रकाश कर दुष्टों को दण्ड तथा धर्मात्माओं का सत्कार करता है वह शासक विद्वानों में सत्कार को प्राप्त होता है।

अधिसानौ नि जिघ्नते वज्रेण शतपर्वणा।

मन्दान इन्द्रो अन्धसः सखिभ्योगातुमिच्छत्यर्चन्ननुस्वराज्यम्।। ऋ. 1.80.6

भावार्थ – जैसे विद्युत अग्नि असंख्यात अच्छे–अच्छे कर्मों से युक्त अपने किरणों से मेघ के अवयवों पर प्रहार करता हुआ प्रकाश को रोकने वाले मेघ के सदा प्रतिकूल रहता है वैसे ही शासक गण उत्तम रीति से विद्या का प्रचार प्रसार करते हुए प्रजा का सुख बढ़ाते हुए अपने राज्य का सत्कार करते हुए अन्न के दाता बनें।

इन्द्र तुभ्यमिदद्रिवोऽनुत्तं वज्रिन्वीर्यम्।

यद्ध त्यंमायिनं मृग तमु त्वं मायजावधीरर्चन्ननु स्वराज्यम्।। ऋ.1. 80.7.

भावार्थ – हे मेघशिखरवत् पर्वतादि युक्त स्वराज्य से सुभूषित अति उत्तम शस्त्रास्त्रों से युक्त सभेश। जिससे उस कपटी मृग के समान पदार्थ भोगने वाले को बुद्धि से निश्चय करके आप हनन करते हैं। सूर्य के समान स्वाधीन पुरुषार्थी, पराक्रमी होकर अपने राज्य की रक्षा करते तथा दुष्टों को दण्ड देते हैं। उस आपके लिए हम लोग प्रसन्नता से उत्तम धन दें। यह धन राष्ट्र के लिए हो।

विते व्रजासोऽअस्थिरन्ननर्ति नाव्या अनु।

महत्त इन्द वीर्यं वाह्वोस्ते बलं हितमर्चननु स्वराज्यम्।। ऋ. 1.86.8.

भावार्थ – हे इन्द्र। जो तेरी शस्त्रास्त्र युक्त दृढ़तर सेना नब्बे तारने वाली नौकाओं को अनुकूलता से व्यवस्थित करती है और जो तेरी भुजाओं में बड़ा पराक्रम और बल स्थित है उससे अपने राज्य का यथावत् सत्कार करता हुआ राजलक्ष्मी को प्राप्त हो।

सहस्रं साकमर्चत परिष्टोभटविंशतिः।

शतैनमन्वनोनवुरिन्द्राय ब्रह्मोद्यतमर्चन्ननु स्वराज्यम्।। ऋ. 1.80.9

भावार्थ – मनुष्यों में विरोध को छोड़े बिना परस्पर सुख कभी नहीं हो सकता। इसलिए मनुष्यों को उचित है कि विद्या तथा उत्तम सुख से रहित और निन्दित मनुष्यों को सभासद् आदिका अधिकार कभी न दें अर्थात् सदैव श्रेष्ठ पुरूषों को ही चुनकर संसद अथवा विधान सभा आदि में भेजे।

इन्द्रो वृत्रस्य तविषीं निरहन्त्सहसा सह।

महत्तदस्य पौरूषं वृत्रंजघन्वाँ असृजदर्चन्ननु स्वराज्यम्।। ऋ. 1.80.10

भावार्थ – जैसे सूर्य अत्यन्त और तेज से सबका आकर्षण और प्रकाश करता है वैसे ही सभाध्यक्ष आदि को भी उचित है कि अपने बल से शुभ गुणों के आकर्षण और न्याय के प्रकाश से राज्य को शिक्षित बनाएँ।

इमे चित्तवे मन्यवे वेपते भिवसा मही।

यदिन्द वज्रिन्नोजसा वृत्रं मरूत्वो अवधीरर्चन्ननु स्वराज्यम्। ऋ.1.80.11

भावार्थ – इस मंत्र में वाचक लुप्तोपमालंकार है। जैसे कार्यपालिका के प्रबन्ध होने से प्रजा गण सुख पूर्वक उत्तम मार्ग से चलते–चलाते हैं वैसे ही सूर्य के आकर्षण से सब आकाशीय पिण्ड इधर उधर चलते–फिरते हैं। जैसे मेघ को बरसाकर सूर्य सब प्रजा का पालन करता है वैसे संसद और सभाध्यक्ष को भी चाहिए कि शत्रु और अन्याय का नाश करके विद्या और न्यास के प्रचार से प्रजा का उत्तम ढंग से पालन करें।

न वेपसा न तन्यतेन्द्रं वृत्रो वि बीमयत्।

अभ्येनं वज्र आपसः सहस्रभृष्टिरायतार्चन्ननु स्वराज्यम्।। ऋ. 1.80.12

पदार्थ – हे सभापते। (स्वराज्यमन्वर्चन्) अपने राज्य का सत्कार करता हुआ तू जैसे (वृत्रः) मेघ (वेपसा) वेग से (इन्द्रम्) सूर्य को (न विवीभयत्) भय प्राप्त नहीं करा सकता है और मेघ ने प्रकाश की हुई (तन्यता) बिजली से भी भय को (न) नहीं दे सकता (एनम्) इस मेघ के ऊप्पर सूर्य प्रेरित (सहस्त्र भृष्टिः) सहस्र प्रकार के दाह से युक्त (आयसः) लोहा के शस्त्र अथवा आग्नेयास्त्र के तुल्य (वज्रः) वज्र रूप किरण (अभ्यायत) चारों ओर से प्राप्त होता है वैसे शत्रुओं पर आप हों।

यद् वृत्रं तव चाशनि वज्रेण समयोधयः।

अहिमिन्द जिघांसतो दिविते वद्वधे शवोऽर्चन्ननुस्वराज्म्।। ऋ.180.13

भावार्थ – जैसे सूर्य अपनी बहुत सी किरणों से बिजली और मेघ का परस्पर युद्ध कराता है वैसे ही सेनापति आग्नेयादि अस्त्र युक्त सेना को शत्रु सेना के साथ युद्ध कराए। ऐसा सेनापति कभी पराजय को प्राप्त नहीं हो सकता।

अभिष्टने ते अद्रिवो यत् स्थाजगच्चरेजते।

त्वष्टा चित्तव मन्यव इन्द्र वे बिज्यते भियार्चन्ननु स्वराज्यम्।। ऋ.1.80.14.

भावार्थ – मनुष्यों को चाहिए कि जैसे सूर्य के योग से प्राणधारी अपने अपने कर्म में वर्तते और सब भूगोल अपनी–अपनी कक्षा में यथावत् भ्रमण करते हैं। वैसे ही सभा से प्रशासित किये राज्य के संयोग से सब मनुष्यादि प्राणी धर्म के साथ अपने–अपने व्यवहार में वर्तकर सन्मार्ग में अनुकूलता से गमनागमन करते हैं।

नहि नु यादधीमसीन्द्रं को वीर्या परः।

तस्मिन्नृम्णमुत क्रतुं देवा ओजांसिसन्द धुरर्चन्ननु स्वराज्यम्। ऋ.1.80.15

भावार्थ – कोई भी मनुष्य परमेश्वर या विद्वान की प्राप्ति करे बिना उत्तम विद्या और श्रेष्ठ सामर्थ्य को प्राप्त नहीं कर सकता। इस हेतु से इनका सदैव आश्रय लेना चाहिए।

यामथर्वा मनुष्पिता दध्यड. धियमत्नन।

तस्मिन् ब्रह्माणि पूर्वयेन्द उक्था समग्मतार्चन्ननु स्वराज्यम्।। ऋ.1.80.16

पदार्थ – हे मनुष्यो। तुम लोग जैसे (स्वराज्यम्) अपने राज्य की उन्नति से सबका (अन्वर्चन) सत्कार करता हुआ (दध्ड्.) उत्तम गुणों को प्राप्त होने वाला (अथर्वा) हिंसा आदि दोषरहित पिता वेद का प्रवक्ता अध्यापक या (मनु) विज्ञान वाला मनुष्य से (याम्) जिस (धियम्) शुभ विद्या आदि गुण क्रिया के धारण करने वाली बुद्धि को प्राप्त होकर (तस्मिन्) उस व्यवहार में सुखों को विस्तार करो। और जिस (इन्द्रे) अच्छे प्रकार सेवित परमेश्वर में (पूर्वया) पूर्व पुरूषों के समान (ब्रह्माणि) उत्तम धन (उक्था) कहने योग्य वचन प्राप्त होते हैं (तस्मिन्) उनको सेवित कर तुम भी उनको (समग्मत) प्राप्त करो।

इस प्रकार हमने देख लिया है कि वेद में स्वराज्य के विषय में सृष्टि के प्रारम्भ में ही बहुत कुछ बता दिया था। स्वामी दयानन्द के वेद भाष्य से साभार। इति।

73, शास्त्री नगर, दादाबाड़ी
कोटा। (राज.)

www.thearyasamaj.org

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2012-14
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2012-14
POSTED AT N.D.P.S.O. ON 18-19 /09/2013
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39/57

डी.ए.वी. तिनसुकिया में हुआ देव-यज्ञ का प्रशिक्षण

असम राज्य के सुदूर पूर्व में अवस्थित तिनसुकिया जिले के निवासी श्री युत भगवान दास जी अग्रवाल ने अपने एकल प्रयास से अपने भूमि पर अपने लागत से सन् 1986 में डी.ए.वी. स्कूल प्रतिष्ठा की थी। तब से विद्यालय में वैदिक फिलॉसफी की नींव बच्चों में डाली जा रही है। वर्तमान विद्यालय में कक्षा–I से XII तक की पढ़ाई होती है। यहाँ कुल 800 (आठसौ) विद्याथी पढ़ रहे हैं।

पिछले दिनों विद्यालय के प्रतिष्ठापक श्री भगवान दास जी अग्रवाल और विद्यालय के शिक्षक–शिक्षिकाओं ने एकत्र होकर छात्र/छात्राओं को सफल रूप से ''देव–यज्ञ का प्रशिक्षण दिया। उक्त पुनीत कार्यक्रम के अवसर पर विद्वान श्री रामायण प्रसाद चौहान और श्री राम निराला जी ने उपस्थित रह कर विद्यार्थियों को राष्ट्रभक्ति की शिक्षा दी।

डी.ए.वी. बुढ़ार में औषधीय पौधे लगाकर मनाया गया स्वतन्त्रता दिवस

डी.ए.वी. बुढ़ार पब्लिक स्कूल ने भारत का 67वाँ स्वतन्त्रता दिवस श्री उग्रभान जी अवस्थी के मुख्य अतिथ्य में एवं डॉ. उर्मिला जी गुप्ता तथा श्री चेयरमेन श्री सी.एल. सरावगी जी के विशेष अतिथ्य में अत्यन्त हर्षोल्लास के साथ मनाया। विविध रंगारंग सांस्कृतिक कार्यक्रम आकर्षण का मुख्य केन्द्र रहे। साथ ही विद्यालय में 15 औषधि के नवीन पौधे लगाये जिसमें मुख्य रूप से अश्वगंधा, सर्पगंधा, गुल बकावली, रतनजोत, ग्वारपाठा, अड़ूसा आदि प्रमुख हैं।

डॉ. उर्मिला जी गुप्ता, आयुर्वेदिक चिकित्सक, के परामर्श से ही विद्यालय ने एक एकड़ जमीन पर औषधि के अनेकानेक पौधरोपण का निर्णय लिया गया है।

प्राचार्या श्रीमती विजयलक्ष्मी नायडू जी ने डॉ. गुप्ता जी के परामर्श पर आभार व्यक्त किया। विद्यालय के चेयरमेन श्री सी.एल.सरावगी जी ने बच्चों एवं शिक्षकों को वृक्षों की उपयोगिता एवं महत्ता बताई तथा अधिक से अधिक वृक्षारोपण करके उनका पालन–पोषण तथा संवर्धन करने हेतु प्रोत्साहित किया। उपस्थित सभी छात्रों शिक्षकों एवं अन्य गणमान्य नागरिकों ने शपथपूर्वक वृक्षों की रक्षा एवं उनके संवर्धन हेतु वचन बद्धता दिखाई।

आर्य अनाथालय फ़िरोज़पुर में रक्षाबंधन पर्व सम्पन्न

आर्य अनाथालय प्रांगण में श्रावणी एवं रक्षाबंधन पर्व स्थानीय सुप्रसिद्ध उद्योगपति, सेवाभावी एवं शिक्षा क्षेत्र के कर्मठ कार्यकर्ता श्री रविकान्त जी गुप्ता (चेयरमेन देवराज ग्रुपस और ट्रैक्नीकल कैम्पस फ़िरोजपुर) की अध्यक्षता में पूर्ण हर्षोल्लास पूर्वक मनाया गया। इस अवसर पर सांस्कृतिक रंगारंग कार्यक्रम योगासन एवं देशभक्ति के गीत आदि प्रस्तुत किए गए। इस अत्यन्त सुन्दर समारोह की शोभा में अभिवृद्धि हेतु स्थानीय सुप्रसिद्ध अधिवक्ता पं. सतीश कुमार शर्मा एडवोकेट, सुप्रसिद्ध आर्य सामाजिक कार्यकर्ता श्री ओम प्रकाश शर्मा, श्री पवन शर्मा, श्री विजय आनन्द श्री मनोज आर्य, बहुत सी सामाजिक संस्थाओं के वरिष्ठ अधिकारीगण, स्थानीय प्रतिष्ठित व्यवसायी डॉक्टर्स, शिक्षाशास्त्री, अनेकों डी.ए.वी. संस्थाओं के प्रिंसीपल उनका सम्माननीय स्टॉफ, आश्रम के शुभचिंतक दानवीर जन सैंकड़ो की संख्या में उपस्थित थे। इन सबका शुभाशीष भी आश्रम के बच्चें को प्राप्त हुआ। श्री रविकांत गुप्ता जी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में भाई बहन के स्नेह एवं परस्पर सुरक्षा के प्रतीक

इस पर्व पर स्त्रीजाति के सशक्तिकरण एवं उनके समुचित संरक्षण एवं विकास पर विशेष बल दिया। उन्होंने कहा कि आर्य अनाथालय के होनहार एवं कुशाग बुद्धि बच्चों को अपने टैक्नीकल कैम्पस में स्थिति इजीनियरिंग कालेज एवं अन्य संस्थाओं में निःशुल्क प्रविष्ट करने एवं शिक्षा प्रदान करने में प्रसन्नता अनुभव करेंगे। आपने हमेशा भरपूर सहयोग देने की विनम्रता पूर्वक घोषणा की। इससे पूर्व स्थानीय विधायक एवं प्रसिद्ध कांग्रेसी कार्यकर्ता स. परमिन्दर सिंह जी पिंकी ने भी आश्रम का निरीक्षण कर बालिकाओं से राखी बंधवाई और अपना आशीर्वाद प्रदान करते हुए सम्भव योगदान का भरोसा दिलवाया।

मुद्रक व प्रकाशक – **श्री प्रबोध महाजन,** सभा मंत्री द्वारा **मदन गोयल** के प्रबंध में **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 से प्रकाशित। स्वामित्व – आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 (दूरभाष : 23362110, 23360059) सम्पादक – **श्री पूनम सूरी**